श्रीगुरुचरणकमलेभ्यो नमः 卐 श्रीसीतारामाभ्याँ नमः

卐 श्रीऊदादेवीजी "पोद्दार" की स्मृतिमें 卐

श्रीरामनामामृत

-: अर्थात् :-

श्रीसीताराम नाम परत्व विषयक भक्तिपूर्ण अनेक ललित पद्यों का अनूठा संग्रह जिसे श्री श्री १००८ श्री

श्रीमान् पं० श्रीरामप्रसादशरणजी

(श्री श्री १००८ श्री श्रीमान् पं० गणेशप्रसादजी मिश्र)

श्रीरामायणाचार्य जी के कृपापात्र शिष्य दासानुदास

हरप्रसादशरण शर्मा

"हरिहर"

ने अनेक महात्माओं के विरचित ग्रन्थोंसे संग्रह किया उसीको

श्रीयुत बाबू गणेशनारायणजी सागरमलजी खेतान

ने उदारता पूर्वक श्रीरामभक्ति प्रचारार्थ छपाकर प्रकाशित किया।

श्रीमद्रामायण सभा।
श्रीरामनौमी श्रीरामजन्म
पंचमवार ४५००

मूल्य प्रेमपाठ
श्रीरामनाम जप

सं० १९९५

जेनरल प्रिंटिंग वर्क्स कलकत्ता।

श्रीगुरुचरणकमलेभ्यो नमः :※: श्रीसीतारामाभ्याँ नमः

श्रीराम सनेही रामगति रामचरण रति जाहि।
तुलसी फल जग जन्मको दियो विधाता ताहि॥

श्री—सीतावर नाम शुभाकर। पर उपदेशहु आपु जपाकर

यु—त आह्लाद जपें जो नितही। लहैं भक्ति सुख सम्पति अतिही

त—म नाशहि सबही चित केरा। करैं तुरत रघुपति उर डेरा

बा—दि जगत कर सब परपंचा। भूलि न प्रेम करहु तेहि रंचा

बू—ते भरि जे राम रटत हैं। तेहि घर यम नहिं पाँव धरत हैं

ग—ति पावत उत्तम ते प्रानी। जिन सियराम चरण रति मानी

ने—म सहित सियराम रटाहीं। ते तन तजि हरि धाम सिधाहीं

श—मन करत संताप पाप को। नेम करत सियराम जापको

ना—म सरिस साधन कछु नाहीं। शिव सनकादिक राम रटाहीं

रा—म नाम सब धर्म मूल है। राम रहित साधनहिं भूल है

य—म की त्रास मिटै एक क्षणमें। सियरामहि सप्रेम धरि मनमें

न—करि स्वाँस को कछु विश्वासा। पलमें आय गहैं यम पाशा

जीवन जन्म सफल 'हरिहर' भजि। विषय बासना सबहीको तजि

संग्रहकर्ता—श्रीमद्रामायण सेवक।

हरप्रसादशरण शर्मा।

श्रीसद्गुरुसदन अयोध्या श्रीरामनौमी।

"श्रीमिथिलाकुंज" कलकत्ता।

॥ श्रीगुरुचरणकमलेभ्यो नमः श्रीसीतारामाभ्याँ नमः ॥
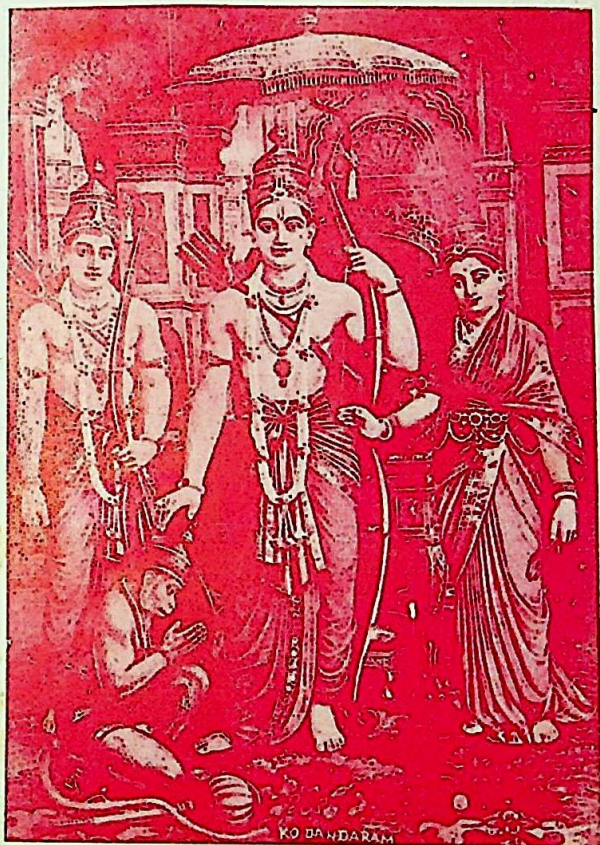
श्रीराम बामदिशि जानकी लषण दाहिनी ओर ।
ध्यान सकल कल्याणमय तुलसी सुरतरु तोर ॥
बंदौं सीताराम, भरत लषण रिपुहन सहित ।
सरयू अवधसुधाम, सकल संत हनुमंत गुरु ॥
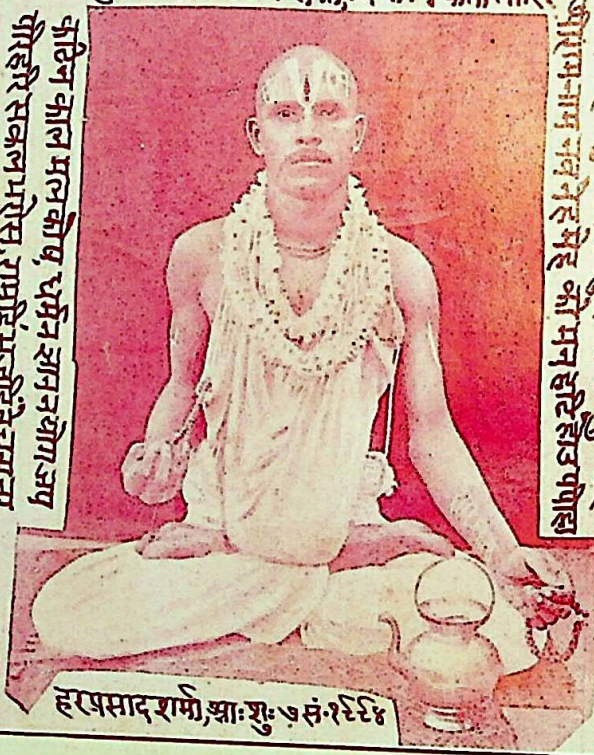
श्रीगुरुचरण कमलेभ्योनमः   श्रीसीतारामाभ्याँनमः

संसारामयभेषजं सुमधुरं श्रीजानकीजीवनं ।
धन्यास्ते कृतिनः पिबन्ति सततं श्रीरामनामामृतम् ॥
सुरूपं शरीरं नवीनं कलत्रं, धनं मेरुतुल्यं वचश्चारुचित्रम् ।
हरे रंघ्रि, युग्मैर्मनश्चेन्न लग्नं, ततः किं ततः किं ततः किं ततः किम् ॥

* श्रीगुरुचरणकमलेभ्यो नमः *

* श्रीसीतारामाभ्यां नमः *

नम्र निवेदन

मानतीय परम भागवतो एवं विद्वज्जनो इस असार संसार-सागरकी दुखद तरंगोंमें अनादि कालसे भटकते हुए दीन प्राणियोंके कल्याणके लिये जहाँ शास्त्रोंने अनेक उपाय बतायेहैं, वहाँ श्रुतियों स्मृतियों तथा स्मृतिकार महात्माओंने इस कठिन कलिकालमें केवल श्रीरामभक्ति एवं श्रीरामनामको ही एकमात्र जीवोंके उद्धारका अन्यतम साधन कहा है। अतः जितनी भी मनुष्य जाति तथा जितने भी प्राणी हैं वह सभी श्रीरामनाम जप व श्रीरामभक्तिके समान रूपसे अधिकारी हैं कहा भी हैं कि.

वैठत सभो सवहि हरिजूकी कौन बड़ोको छोट।
शूरदास पारसके परसे मिटति लोहकी खोट॥

अतः—श्रीसीतारामजीने कृपाकर यह देवदुर्लभ नरतन संसार समुद्रसे तरनेके लिये जहाज रूप प्रदान किया हैं। उसे पाकर भी सामान्य पशुओंकी तरह ही इस शरीरके भरण पोषणमें ही उसे व्यर्थ विताकर उसी संसृति चक्रमें
"पुनरपि जननं पुनरपि मरणं। पुनरपि जननी जठरे शयनम्॥"
की दशाको प्राप्त हो इससे अधिक खेदका विषय मनुष्यके लिये और क्या हो सकता है क्योंकि—

"साधन धाम मोक्षकर द्वारा। पाय न जेहि परलोक सँभारा

सो परत्र दुख पावहि, शिर धुनि २ पछिताय।
कालहि कर्महि ईश्वरहि मिथ्या दोष लगाय॥

क्योंकि—

यहि तनकर फल विषय न भाई। स्वर्गहु स्वल्प अन्त दुखदाई॥

अतः उस नर शरीरका पाकर जो अज्ञ विषय वासनाहीमें अपने जीवनकी इतिश्री मानले वह मन्द बुद्धि है—

"ताहि कबहुँ भल कहै न कोई। गुंजा गहै परसमणि खोई"

ऐसी परिस्थितिमें पड़े हुए मायावद्ध जीवोंके लिये, महात्माओंने श्रुति शास्त्र सम्मत जो उपाय कहा, तथा श्रीरामनामका महत्व जो सम्पूर्ण तापत्रयका विनाशक हैं उसे श्रीसीतारामजी की कृपा तथा प्रातःस्मर्णीय अज्ञान तिमिरनाशक श्रीगुरुदेवजी के श्रीमुखद्वारा जो ज्ञान रविकिरण प्रभासे सेवक प्राप्त कर यथा मति धारण कर सका, उन्हें श्री श्री १००८ श्रीश्रीमद्गोस्वामी भक्त शिरोमणि अनन्य श्रीसीतारामोपासक एवं अखंड श्रीराम नामके अन्यतम विश्वासी कवि सम्राट भक्तवर श्रीतुलसीदास-जीने श्रीमद्रामायणमें जो श्रीरामनामका परत्व कहा हैं उसे ही भूमिका रूपमें आप प्रेमियोंके सन्मुख यत्किंचित् रूपमें रखता हूँ—

चौ० बन्दों रामनाम रघुवरको। हेतु कृषानु भानु हिमकरको॥
मंगल भवन अमंगल हारी। द्रवहु सो दशरथ अजिर विहारी॥
विधि हरिहर मय वेद प्राणसो। अगुण अनूपम गुणनिधानसो॥
महामन्त्र जो जपत महेशू। काशी मुक्ति हेतु उपदेशू॥
मन्त्र महामणि विषय व्यालके। मेटत कठिन कुअंक भालके॥
महिमा जासु जान गणराऊ। प्रथम पूजियत नाम प्रभाऊ॥
जान आदि कवि नाम प्रतापू भयउ सिद्धि करि उलटा जापू॥

सहस नाम सम सुनि शिव बानी। जपि जेंई पिय संग भवानी॥
नाम प्रभाव जानि शिव नीके। कालकूट फल दीन अमीके॥
दो० वर्षा ऋतु रघुपति भगति, तुलसी शालि सुदास॥
श्रीरामनाम वरवर्णयुग, श्रावण भादौं मास॥
सुमिरत सुलभ सुखद सब काहू। लोक लाहु परलोक निवाहू॥
कहत सुनत समझत शुठि नीके। रामलषन सम प्रिय तुलसीके॥
भक्ति सुतिय कल करण विभूषण। जग हित हेतु विमल विधुपूषण॥
स्वाद तोष सम सुगति सुधाके। कमठ शेष सम धर वसुधाके॥
जनमन कंज मंजु मधुकरसे। जीह यशोमति हरि हलधर से॥
दो० एक क्षत्र एक मुकुट मणि, सब वरणन पर जोउ।
तुलसी रघुवर नामके, वरण विराजत दोउ॥
रामनाम मणि दीप धरि, जीह देहरी द्वार।
तुलसी भीतर बाहिरहु, जो चाहसि उजियार॥
नाम जीह जपि जागहिं योगी। बिरतिबिरंचि प्रपंच वियोगी॥
ब्रह्म सुखहि अनुभवहिं अनूपा। अकथ अनामय नाम न रूपा॥
जाना चहहिं गूढ़ गति जेऊ। नाम जीह जपि जानहिं तेऊ॥
साधक नाम जपहिं लवलाये। होंहिं सिद्धि अणिमादिक पाये॥
जपहिं नाम जन आरत भारी। मिटहिं कुसंकट होंय सुखारी॥
चहुं युग चहुं श्रुति नाम प्रभाऊ। कलि विशेष नहिं आन उपाऊ॥
दो०—सकल कामना हीन जे, श्रीरामभक्ति रस लीन।
नाम सुप्रेम पियूष ह्रद, तिनहुँ किये मन मीन॥
नाम सप्रेम जपत अनयासा। भक्त होंय मुद मङ्गल वासा॥
सहित दोषदुख दास दुराशा। दलहिनाम जिमि रवि निशिनाशा॥
भंञ्जेउ राम आप भव चापू। भवभय भंजन नाम प्रतापू॥

निश्चर निकर दले रघुनन्दन। नाम सकल कलि कलुष निकंदन।
दो०—शिवरी गीध सुसेवकन, सुगति दीन रघुनाथ।
नाम उधारे अमित खल; वेद विदित गुण गाथ॥
नाम लेत भव सिंधु सुखाहीं। करहु विचार सुजन मनमाहीं॥
सेवक सुमिरत नाम सप्रीती। विन श्रम प्रवल मोह दल जीती॥
फिरत सनेह मगन सुख अपने। नाम प्रसाद शोच नहिं सपने॥
दो०—ब्रह्म रामते नाम बड़; वरदायक वरदानि।
रामचरित शतकोटि महँ, लिय महेश जिय जानि॥
नाम प्रसाद शंभु अविनाशी। साज अमंगल मंगल राशी॥
शुक सनकादि सिद्ध मुनि योगी। नाम प्रसाद ब्रह्म सुख भोगी॥
नारद जानेहु नाम प्रतापू। जगप्रिय हरिहर हरि प्रिय आपू॥
नाम जपत प्रभु कीन्ह प्रसादू। भक्त शिरोमणि भे प्रहलादू॥
ध्रुव सगलानि जपेउ हरि नामू। पावा अचल अनूपम ठामू॥
सुमिरि पवनसुत पावन नामू। अपने वश करि राखे रामू॥
अपर अजामिल गज गणिकाऊ। भये मुक्त हरिनाम प्रभाऊ॥
कहहुँ कहाँ लगि नाम बड़ाई। राम न सकहिं नाम गुणगाई॥
दो०—रामनामको कल्पतरु कलि कल्याण निवास।
जो सुमिरत भये भाग्यसे, तुलसी तुलसीदास॥
चहुँ युग तीन काल तिहुँ लोका। भये नाम जपि जीव विशोका।
वेद पुरान संत मत एहू। सकल सुकृत फल राम सनेहू॥
ध्यान प्रथम युग मख विधि दूजे। द्वापर परितोषत प्रभु पूजे॥
कलि केवल मल मूल मलीना। पाप पयोनिधि जनमन मीना॥
नाम कामतरु काल कराला। सुमिरत शमन सकल जगजाला॥
दो०—रामनाम नर केशरी, कनक कशिपु कलिकाल।
जापक जन प्रहलाद जिमि; पालहिं दलि सुरशाल॥

भाव कुभाव अनख आलसहू। नाम जपत मंगल दिशि दशहू॥
रामनाम कर अमित प्रभावा। संत पुरान उपनिषद गावा॥
संतत जपत शंभु अविनाशी। शिव भगवान ज्ञान गुणराशी॥
जासु नाम भ्रम तिमिर पतंगा। तेहि किमि कहिय विमोह प्रसंगा
काशी मरत जन्तु अवलोकी। जासु नाम बल करहुँ विशोकी॥
जासु नाम बल शंकर काशी। देत सबहिं समगति अविनाशी॥
विवशहु जासु नाम नर कहहीं। जन्म अनेक सँचित अघ दहहीं॥
जाकर नाम सुनत शुभ होई। मोरे गृह आवा प्रभु सोई॥
सो सुखधाम राम अस नामा। अखिल लोक दायक विश्रामा॥
जिनकर नाम लेत जगमाहीं। सकल अमंगल मूल नशाहीं॥
करतल होय पदारथ चारी। ते सियराम कहेउ कामारी॥
जासुनाम सुमिरत एक बारा। उतरहिं नर भव सिंधु अपारा॥
राम राम कहि जे जमुआहीं। तिनहि न पाप पुंज समुआहीं॥
उलटा नाम जपा जगजाना। वाल्मीक भये ब्रह्मसमाना॥
दो०—श्वपच, शबर, खश यवन, जड़, पामर, कोल, किरात।
राम कहत पावन परम, होत भुवन विख्यात॥
बारेक राम कहत जग जेऊ। होत तरण तारण नर तेऊ॥
जासु नाम पावक अघ तूला। सुमिरत सकल सुमंगल मूला॥
अतुलित भुज प्रताप बलधामं कलिमल विपुल विभञ्जन नामं॥
दो०—राम राम कहि तन तजहिं, पावहि पद निर्वान।
करि उपाय रिपु मारेउ; क्षणमहँ कृपानिधान॥
मरतहु जासु नाम मुख आवा अधमहुँ मुक्त होय श्रुति गावा॥
यद्यपि प्रभुके नाम अनेका। श्रुति कह अधिक एक ते एका॥
राम सकल नामनते अधिका। होउ नाथ अघ खगगण बधिका॥

दो०—राका रजनी भक्ति तव, राम नाम सोइ सोम।
अपर नाम उड़गण विमल, वसहु भक्त उर व्योम ॥
जन्म जन्म मुनि यतन कराहीं। अन्त राम कहि आवत नाहीं ॥
पापिहु जिनकर नाम सुमिरहीं। अति अपार भवसागर तरहीं ॥
राम राम तेहि सुमिरण कीन्हा। हृदयहर्ष कपि सज्जन चीन्हा ॥
जासु नाम जपि सुनहु भवानी। भव बन्धन काटहिं नर ज्ञानी ॥
राम नाम बिन गिरा न सोहा। देखि विचारि त्यागि मदमोहा ॥
जासु नाम त्रय ताप नशावन। सो प्रभु प्रकट समझि जिय रावन ॥
सो०—सुनहु भानुकुलकेतु, जामवन्त कर जोरि कह।
नाथ नाम तव सेतु, नर चढ़ि भवसागर तरहिं ॥
दो०—गिरिजा जाकर नाम जपि, नर काटहिं भव पास।
सो प्रभु आव कि बन्धतर, व्यापक विश्व निवास ॥
बैठे देखि कुशासन, जटा मुकुट कृशगात।
श्रीराम राम रघुपति जपत, श्रवत नयन जलजात ॥
छ०—विश्वास करि सब आश परिहरि दासजे तव है रहे।
जपि नाम तव बिन श्रम तरहिं, भव नाथ सो स्मरामहे ॥
तव नाम जपामि नमामि हरी, भवरोग महामद मान अरी।
गुणशील कृपा परमायतनं, प्रणमामि निरन्तर श्रीरमनम् ॥
दो०—मम गुणग्राम नाम रत; गत ममता मदमोह।
ताकर सुख सोइ जाने, चिदानन्द सन्दोह ॥
कलिमल मथन नाम ममताहन। तुलसीदास प्रभु पाहि प्रणतजन ॥
दो०—भव बन्धनते छूटहीं, नर जपि जाकर नाम।
खर्व निशाचर बांधेउ, नागपाश सोइ राम ॥
महिमा नाम रूप गुणगाथा। सकल अमित अनन्त रघुनाथा ॥

तीरथ अमित कोटि शत पावन । नाम अखिल अघपुंज नशावन ॥

दो०—जासु नाम भवभेषज हरण घोर त्रयशूल ।
सो कृपालु मोहि तोहि पर सदा रहहिं अनुकूल ॥

छ०—आभीर यवन किरात खल श्वपचादि अति अघ रूपजे ।
कहि नाम वारेक तेपि पावन होंहिं राम नमामि ते ।

अस्तु—परम भागवतो ! आप इससे स्वयं विचार कर सकेंगे कि श्रीरामनामका क्या महत्व है । महात्माओं तथा श्रुतियोंका मत है भक्तवर प्रह्लादका वचन है—

श्लो०—श्रीराम नाम जपतां कुतो भयं सर्वतापशमनैक भेषजम् ।
पश्यतात ममगातसन्निधौ पावकोऽपि सलिलायतेऽधुना ॥
सर्वोपापविनिर्मुक्ता नाममात्रैकजल्पकाः ।
जानकी वल्लभास्यापिधाम्निगच्छन्तिसादरम् ॥
भुक्तिमुक्तिप्रदानृणां सर्वकामफलप्रद ।
सर्व सिद्धिकरानंत नमस्तुभ्यंजनार्दन ॥

श्लो०—श्रीरामनामाखिलमंत्रवीजं सञ्जीवनं चेद्धृदये प्रविष्टं ।
हलाहलं वा प्रलयानलं वा मृत्युर्मुखं वा विशतां कुतोभि ॥
ब्रह्माम्भोधि समुद्भवं कलिमल प्रध्वंसनं चाव्ययं
श्रीमच्छम्भु मुखेन्दु सुन्दरबरं संशोभितं सर्वदा ।
संसारामयभैषजं सुमधुरं श्रीजानकीजीवनं ।
धन्यास्ते कृतिनः पिवन्ति सततं श्रीरामनामामृतम् ॥

सुरूपं शरीरं नवीनं कलत्रं, धनं मेरुतुल्यं वचश्चारुचित्रम् ।
हरे रङ्घ्रियुग्मैर्मनश्चेन्न लग्नं ततःकिं ततःकिं ततःकिं ततःकिम् ॥

तथा जब अन्तिम समय पर परम श्रीरामभक्त श्रीमद्गोस्वामी श्रीतुलसीदासजी महाराज इस असार संसार सागरसे अपने

प्राणाधार श्रीसीतारामजीसे मिलने जाने लगे तव पूर्व ही कहे

दो०—श्रीरामनाम यश वर्णिके भयो चहत अव मौन।
तुलसीके मुख दीजिये, अजहूँ "तुलसी सौन ॥

तव काशीके वड़े २ सहनशील एवं दूरदर्शी विद्वान पं० भक्तजन आपके पास दर्शनार्थ एकत्र हुए तथा आपसे आग्रह करने लगे। कि भगवन् हमारे जैसे मायावद्ध जीवोंके उद्धारका मार्ग कृपाकर वताइये तव आपने शान्तिभावसे कहा—

सवैया—अल्पतो अवधि जीव तामें वहु शोच पोच करिवे कह वहुत हैं पै काह काह कीजिये। पार ना पुराणनहूँ को वेदहूको अन्तनाहिं वाणी तो अनेक मन कहाँ कहाँ दीजिये। काव्यकी कला अनन्त छन्दको प्रवन्ध वहु राग तो रसीले रस कहाँ कहाँ पीजिये। सव वातनकी एक वात तुलसी वताये जात जन्म जो सुधारा चाहो "तो" श्रीरामनाम लीजिये।

अतः सज्जनों,

यह कलिकाल मलायतन, मन करि देखि विचार।
श्रीरघुनायक नाम तजि, नहिं कछु आन अधार॥
कठिन कालमल कोष, धर्म, न ज्ञान, न योग जप।
परिहरि सकल भरोस, रामहिं भजहिंते चतुरनर॥

क्योंकि कलिकालमें अन्य साधन सुलभ भी नहीं इस समय ध्यान, यज्ञ, पूजन आदि पूर्ण रूपेण वनना असम्भवसा है क्योंकि आज हमारे साधनोंमें वहुत सी त्रुटियां आ गई हैं इसी भविष्य को ध्यानमें रखकर त्रिकालज्ञऋषियोंने कलिमें श्रीरामनामको ही आधार वताया है श्रीमद्गोस्वामी श्रीतुलसीदासजीनेमें भी कलिमें एक मात्र साधन श्रीरामनाम ही को कहा है।

"नहिं कलि कर्म न भक्ति विवेकू। श्रीरामनाम अवलम्बन एकू॥
नहिं कलियोग यज्ञ तप दाना। एक अधार राम गुण गाना॥
सब भरोस तजि जो भजि रामहिं। प्रेम समेत गाव गुण ग्रामहिं॥
सो भव तरि कछु संशय नाहीं। नाम प्रताप प्रकट कलि माहीं॥
ध्याइय रामहिं गाइय रामहिं। संतत सुनिय राम गुण ग्रामहिं॥
दो०—सतयुग त्रेता द्वापरहु, पूजा मख अरु योग।
जो गति होय सो कलि हरिहि, नामते पावहिं लोग॥

श्लोक—ध्यायन् कृते यजन् यज्ञैस्त्रेतायां द्वापरेऽर्चयन्
यदा प्नोति तदाप्नोति कलौ संकीर्त्य केशवम्
हरेर्नाम हरेर्नाम हरेर्नामैव केवलम्
कलौ नास्तैव नास्तैव नास्तैव गतिरऽन्यथा
कल्याणानां निधानं, कलिमलमथनं पावनं पावनानां,
पाथेयं यन्मुमुक्षोः सपदि परपद प्राप्तये प्रस्थितस्य।
विश्रामस्थानमेकं कविवर-वचसां जीवनं सज्जनानाम
बीजं धर्मद्रुमस्य प्रभवतु भवतां भूतये रामनाम॥

तथा उसे ही श्रीश्यामसुन्दर लीला पुरुषोत्तम श्रीनन्द नन्दन आनन्दकन्द भगवान श्रीकृष्णचन्द्रजीने गीतामें कहा है—

अपिचेत्सुदुराचारो भजते मामन्यभाक्।
साधुरेव स मन्तव्यः सम्यग्व्यवसितो हि सः
तेषां सतत युक्तानां भजतां प्रीति पूर्वकम्।
ददामि बुद्धियोगं तं येन मामुपयान्तिते॥ १०-१०
क्षिप्रं भवति धर्मात्मा शश्वच्छान्ति निगच्छति।
कौन्तेय प्रतिजानीहि न ये भक्तः प्रणश्यति॥ ९-३१
अनन्यचेता सततं यो मां स्मरति नित्यशः।

तस्याहं सुलभः पार्थ नित्य युक्तस्य योगिनः ॥ ८ ॥ १४
नाहं वसामि वैकुण्ठे योगिनां हृदये न च।
मद्भक्ता यत्र गायन्ति तत्र तिष्ठामि नारद ॥

अस्तु! यों तो श्रीमद्रामायण भक्तिरत्नोंका अमूल्य सिंधु है परन्तु श्रीमद्रामायण रूपी भक्ति सिंधुमें कैसे २ अमूल्य रत्न (जैसे उच्चकोटिकी राजनीतिक सामाजिक तथा धार्मिक सद्शिक्षासे परिपूर्ण) कहां २ भरे पड़े हैं उन्हें प्रायः नित्यके पाठ करने वाले प्रेमियोंमें भी बहुत कम जानते हैं अतः सर्व-साधारणके जानने योग्य उन अमूल्य रत्नोंका दिग्दर्शन जो श्री गुरुदेवजी द्वारा सेवक उपलब्ध किया, उन्हें विशेष रूप (जो-प्रत्येक श्रीमद्रामायण प्रेमोको कण्ठ करने चाहिये) से उद्धृत करता हूँ आशा ही नहीं दृढ़ विश्वास भी है कि श्रीमद्रामायण प्रेमी उन्हें कण्ठ ही नहीं करेंगे अपितु तदनुकुल आचरण यथा नवधा भक्ति, सन्त धर्म एवं मनुष्य शरीरका प्रधान कर्तव्य पालन कर अपने जीवनको सुधारते हुए श्रीमद्रामायण रूपी दृढ़ नावपर चढ़ अनायास इस असार संसार सागरसे पार हो जायगे, यथा

जो फल कोटिन यज्ञ किये अरु जो फल मक्र प्रयाग नहाये।
जो फल धामनके परसे अरु जो फल क्षेत्रन बास बसाये॥
जो फल योग अखंड किये और जो फल पूरण नेम निवाहे।
जो फल दान अमान किये पर सो फल राम कथा एक गाये॥

श्रीरामचरण रति जो चहैं अथवा पद निर्वाण
भाव सहित सो यह कथा करैं श्रवणपुटपान

भव सागर चह पार जो पावा। राम कथा ताकहँ दृढ़ नावा॥

अतः मेरी यही हार्दिक इच्छा है कि आप सब हरिदास भी उसी भक्ति मार्गका अनुशरण करें जैसा कि—

"सवके गृहानत होय पुराना। राम कथा रुचिराकर नाना।"
तथा साथही हमारे आधुनिक विद्वान जो हर वातमें नवीनताको ही स्थान देना चाहते हैं और श्रीमद्रामायणजीको प्राचीन विचारोंकी पृष्ठ पोषक समझ उपेक्षा करते हैं उन्हें श्रीमद्रामायण से सेवक यह सिद्धि कर वताना चाहता है कि श्रीतुलसीदासजी परम सुधारक एवं उन्नत विचारोंके थे। जैसे अछूतोद्धारका सर्वोत्तम प्रमाण—आप जव भक्तवर श्री भरतजी रघुवंश भूषण श्री रामजीसे मिलने जाते हैं उस समय आप श्रीराम गुरु आचार्य शिरोमणि श्री वशिष्ठजीके द्वारा निषाद् राजको हृदयसे लगाना "यहि समनिपट नीच कोउ नाहीं, वड़ वशिष्ठ सम को जग माही

तेहि लखि लषणहुं से अधिक, मिले महा मुनि राव॥
सो सीतापति भजनको, प्रकट प्रताप प्रभाव॥
श्वपच शवर खश यवन जड़, पामर कोल किरात॥
श्रीराम कहत पावन परम, होत भुवन विख्यात॥

केवल श्रीगुरुदेव वशिष्ठजी ही नहीं मर्यादा पुरुषोत्तम भगवान श्रीरामजो भी स्वयं आदर्श दिखाये।

यहि तो राम लाय उर लीना। कुल समेत जग पावन कीना॥

तथा पुनः श्रीशिवरीजीके आश्रममें जाकर वड़े २ आचार्य शिरोमणियोंके अहंकारको तोड़कर दिखाये कि मेरे समक्ष मेरे दरवार में भक्त ही सर्वोच्चस्थान पाता है।

"भक्ति" नव में जिनके एकहु होई। नारि पुरुष सचराचर कोई सो अतिशय प्रिय भामिनि मोरे। सकल प्रकार भक्ति दृढ़ तोरे
पुरुष नपुंसक नारि नर, सचराचर जग कोइ
सर्व भाव भजि कपट तजि, मोहि परम प्रिय सोइ

अधिक बढ़ावत आप ते, जन महिमा रघुवीर
शिवरी पद रज परशिके, शुद्ध कियो सर नीर

तथा—"नीच जानि जो मेरे दासको जो कोई आंख दिखावे।
अतिशय बड़ो करों मैं वाका, ब्रह्माहुँ माथ नवावे॥"

१ एक धना, दुसरो सधना, कविरा, मलुका, रैदास चमारो
जावैं नहीं तहां आगे खड़े सव देखनको रघुवीर अखारो
कौन सुने अरजी गरजी चकचौंधि रह्यो कवि वृन्द विचारो
ऐते बड़े करुणानिधिको इन दासनने दरवार विगारो

२ अरि होय मीत होय मीठौ चाहैं तीत होय मेरो अवलम्ब तो विलम्ब ना लगाऊँ मैं। पातक प्रचुर होय चाहे धर्मधुर होय मेरो होंन चाहै ताहि अपनो वनाऊँ मैं। द्विजिश्याम धर्म कर्म यही मेरो जानो सत्य मर्म वात आपने स्वभावकी वताऊँ मैं। कौन हूँ वर्ण होय कैसोहू आचरण होय आवे जो शरण ताहि सद्य अपनाऊँ मैं।

३ धारिये धीरज धर्म सनातन सत्य सदा समता न विसारिये।
सारिये भक्ति करारे कलानकै मत्त मलीन महा गज मारिये॥
मारिये मोह, मदादिक, मत्सर गाय गोविन्द गुमानहिं गारिये।
गारिये द्वैत विचार विनायक नायक रामसिया चित धारिये॥

४ सोई भलौ जो रामहिं गावै।
स्वपच प्रसन्न होंय जो सेवक, विन गोपाल द्विज जन्म न भावैं॥
वाद-विवाद यज्ञ व्रत साधै, कतहूँ जाय जन्म डहकावै।
होइ अटल जगदीश-भजनमें, सेवा तासु चारि फल पावै॥ २॥
कहू ठौर नहिं चरण-कमल बिन, भृङ्गी ज्यों दशहूँ दिशि धावै।
शूरदास प्रभु संत समागम, आनंद अभय निशान वजावैं॥ ३॥

अतः सुधारक बन्धुओ जरा नेत्र खोलकर श्रीमद्रामायणके पृष्ठ उलट कर देखो तब श्रीतुलसीदासजीके ऊपर आक्षेप करना यह दूसरी बात है कि कोई रामायणी अपनी अल्पज्ञता अथवा स्वार्थ बुद्धिसे श्रीगोस्वामीजीके वास्तविक मर्मका अर्थ और ही लगावें—

स्वदेश प्रियता भी—

भूषण बसन सुदेश सुहाये। अंग अंग रचि सखिन बनाये॥
तथा—सुग्रीवहिं प्रथमहिं पहिराये। भरत बसन निज हाथ बनाये
कितना उच्च आदर्श हैं मित्रो ? अब श्रीरामायण प्रेमियो आपसे भी सादर कर बद्ध प्रार्थना है कि आप श्रीगोस्वामीजीके इस उपरोक्त कथन पर ध्यान देकर तदनुकूल अपने भेष भूषाका परिमार्जन कर उच्च आदर्श सर्व साधारणके समक्ष रखते हुए (क्योंकि आप आचार्य हैं) इन सुधारक भाइयोंकी ओछी दलीलों का क्रियात्मक उत्तर दें केवल श्रीमद्रामायणजीको अपने स्वार्थ साधनका ही एक मात्र आधार न बनावें क्योंकि—

भरा नहीं जो भावसे बहती जिसमें रस धार नहीं।
वह हृदय नहीं वह पत्थर है जिसमें स्वदेशका प्यार नहीं॥
दशा भाइयोंकी जिन्होंने न जानी। कहेगा उन्हें कौन देशाभिमानी।
आभरण नर देहका बस एक पर उपकार है।
हारको भूषण कहै उस बुद्धिको धिक्कार है॥

अतः अपने ही शरीरके भरण पोषणमें समय नष्ट न कर स्वयं तदनुकूल आचरण कर उस आदर्शको रक्खो—

पर उपकार बचन मन काया। संत सहज स्वभाव खगराया॥
संत विपट सरिता गिरि धरणी। परहित हेतु इनहिं की करणी॥

परहित वस जिनके मनमाहीं। तिनकहँ जग दुर्लभ कछु नाहीं।

अतः खादीका शुद्ध एवं पवित्र वस्त्र धारणकर दीनांको अन्न दान देते हुए स्वदेशके उत्थान कार्यमें भी सहायक बनों जिसमें किसीको आपके ऊपर किसी तरहका आक्षेप करनेका अवसर ही न आये। भगवान भी केवल शुद्ध भाव ही से प्रसन्न होते हैं रेशमी वस्त्र एवं चमक दमकसे नहीं फिर क्यों न पवित्रताके साथ ही अनायास देशकी सेवामें सहायक बनो आपको जानना चाहिये कि ऽ॥ सेर रेशम स्वच्छ तैयार होनेमें ४० हजार कीड़ोंका वध होता है इसमें धर्म धन दोनोंका नाश होता है साथ ही धर्म धनकी रक्षाके साथ ही साथ देशकी भी रक्षा स्वतः खादीके साथ होती हैं विदेशी वस्त्रका एक एक तागा भारतकी परतन्त्रताके बन्धनोंको दृढ़, तथा खद्दरका एक २ धागा उस पराधीनताकी पासको नष्ट कर देता है अस्तु—

आमके आम गुठलीके दाम। पैसेकी वचत ओ देशका काम॥

महानुभावो मैं कोई कवि अथवा विद्वान नहीं हूँ और न इसमें मेरा कुछ कृत्य ही है यह पूज्यपाद परम श्रद्धास्पद श्रीगुरुदेवजी श्री श्री १००८ श्री श्रीमान पं० श्रीरामप्रसादशरणजी (श्री श्री १००८ श्री पं० गणेशप्रसादजी मिश्र श्रीरामायणाचार्यजी) के श्रीचरणोंकी कृपा व महात्मावर श्रद्धास्पद श्रीमान पंडित-प्रवर भक्तिभूषण श्री श्री १००८ श्री पं० धरणीधराचार्यजी जिनकी महती कृपा इस श्रीमद्रामायण सभापर बराबर रहती है उन्हीं महानुभावोंके चरणोंका अनुग्रह है जिससे आपकी सेवा इस रूपमें करनेमें यत्किंचित समर्थ हुआ यदि इससे आप महानुभावोंकी रुचि श्रीमद्रामायण कथा एवं श्रीरामनाममें हुई तो सेवक अपने

परिश्रमको सफल समझेगा तथा इसमें जो कुछ गुण हो तो वह श्रीगुरुदेवजीकी कृपाका हैं और त्रुटियोंकी तो कुछ कमी नहीं जो सेवककी अल्पज्ञता वस हुई हैं उनके लिये क्षमाप्रार्थी हूँ तथा पूर्व संस्करणोंमें जो त्रुटि रहीं तथा उनका बोध मेरे जिन मित्रोंने कराया उनको धन्यवाद देता हुआ यह प्रार्थना करता हूँ कि वह महानुभाव सेवक पर बराबर इसी तरह कृपा बनाये रखेंगे तथा मेरी अयोग्यताको न विचार कर इसमें जो श्रीरामनामका परत्व संग्रह है केवल उस गुणको ही ग्रहण करेंगे क्योंकि, "मधुकर सरिस संत गुणग्राही" के अवस्वको विचारकर ही यह अनधिकार चेष्टा की गई है क्योंकि "ज्यों बालक कह तोतरि बाता। सुनहिं मुदित मन पितु अरु माता।" और यही कारण तथा आपकी गुणग्राहकता है कि आज इस संग्रहका पंचम संस्करण आपकी सेवामें उपस्थित कर रहा हूँ तथा कई स्थानों में जहाँ श्रीरामनामका प्रयोग आया है वहाँ काव्यकी दृष्टिसे यद्यपि "राम" मात्र पाठ होना चाहिये किन्तु सेवक "श्री" संयुक्त पद रखा है वह आप काव्य मर्मज्ञजन काव्यकी गणनामें न रखें "श्री" "श्री" का बोधक है। तथा जिन २ महानुभावोंसे इस संग्रहको प्रकाशित करनेमें सहायता ली गई है उनका मैं हृदयसे आभारी हूँ तथा इसके प्रकाशनका श्रेय भी प्रायः उन्हीं हरिदासों को है जिनमें विशेषतः श्रद्धास्पद बन्धु श्रीश्रीकान्तशरणजी श्री पं० बृजभूषणाचार्यजी श्रीरामनायकाचार्यजी श्रीरामानन्तशरणजी श्रीरामसुखविलास शरणजी श्रीसियाकुंजविहारीशरणजी पं० श्रीकिशोरीशरणजी पं० श्रीबद्रीदासजी श्रीश्यामसुन्दर शरणजी श्रीरघुनाथशरणजी श्रीरामबहादुरजी श्रीरामनाथशरणजी

श्रीरामलखनशरणजी श्रीरामभरोसशरणजी बाबा श्रीरामबिहारी शरणजी श्रीसीतारामशरणजी श्रीवृजनाथशरणजी बाबू श्री जानकीदासजी श्रीमुरलीधरजी श्रीहरीरामजी श्रीरामविलास शरणजी श्री पं० विद्यारामजी श्रीब्रह्मेश्वरशरणजी श्रीरामलगन शरणजी श्रीरामदिनेशशरणजी श्रीसूर्यपालजी द्विवेदी, श्रीराम-नरसिंहशरणजी आदिको हृदयसे धन्यवाद देता हुआ उन श्रीसीताराम भक्तोंके प्रति सप्रेम कृतज्ञता प्रकट करता हूँ अस्तु

श्रद्धेय श्रीरामभक्तमहानुभावो ?

बहु विधि सुमनोंसे संचित मधु किया इसे अपना लेना।
हंस रूप हो गुणपय पीकर अवगुणनीर त्याग देना॥

साथही उदारचेता परम भगवत भागवत कैंकर्य निष्ठा निपुण श्रद्धेय श्रीयुत बाबू गणेशनारायणजी सागरमलजी आदि खेतान बन्धुओंने इसके प्रकाशनका भारवहन किया उन्हें धन्यवाद देता हुआ उनके प्रति कृतज्ञता प्रकट करता हुआ आशा करता हूँ कि वह सर्वदा इसी प्रकार भक्तिमार्गपर आरूढ़ रह श्री रामनाम व श्रीराम भक्ति प्रचारादि शुभ धार्मिक कार्योंमें तत्पर रहेंगे—

विनीत सेवक भागवतजन कृपोकांक्षी

हरप्रसादशर्म्मा बरहन पोष्ट (आगरा)

श्री सद्गुरुसदन गोलाघाट अयोध्या

श्री मद्रामायण सभा कलकत्ता श्रीरामनौमी १९९५

* श्रीगुरुचरणकमलेभ्यो नमः *

* श्रीसीतारामाभ्यां नमः *

* वन्दना *

श्रीगुरुचरण सरोजरज निज मन मुकुर सुधार।
वरणहुँ रघुवर विशद यश जो दायक फल चार॥
श्रीराम लखन सिय उर्मिला भरत मांडवी रानि।
शत्रुशोल श्रुतिकीर्ति पद नमहुँ जोरि युग पानि॥
श्रीसीय मांडवी उर्मिला श्रुतिकीरति बरबाम।
चारि कुँवरि चारिहु रतन तुलसी करत प्रणाम॥
वन्दहुँ सियपिय राम, भरत मांडवी प्राण प्रिय।
लखन उर्मिला जान, श्रुति कीरति पति शत्रुहन॥
वन्दहुँ तुलसीदासपद रामचरित सरकीन।
सबहिं सुलभ रघुवर कथा भाषारचि सुख दीन॥
वन्दहुँ पवन कुमार, खलवन पावक ज्ञान घन।
जासु हृदय आगार, वसहिं राम शर चाप धरि॥
भक्ति भक्त भगवन्त गुरु, नाम चारि वपुएक।
इनके पद वन्दन किये, नाशहिं विघ्न अनेक॥
विबुध विप्र बुध गुरुचरण, बन्दि कहहुं कर जोर।
ह्वै प्रसन्न पुरवहु सकल, मंजु मनोरथ मोर॥
वन्दो सीताराम, भरत लषण रिपुहन सहित।
सरयू अवध सुधाम, सकल सन्त हनुमन्त गुरु॥
वन्दों देव गणेश, भक्ति भारती शिवशिवा।

श्रीरामायण श्रुति शेष, कुम्भजादि मुनि रामरत।
रामं कोमलश्यामसुन्दरतनुं पीताम्बरालंकृतं।
कोटीन्द्वर्कप्रकाशमानममलं राजीवनेत्रं विभुम्॥
कैशोरं द्विभुजं धनुश्शरधरं श्रीसीतया संयुतम्।
वन्देहं भरतादि बन्धु सहितं राजाधिराजं परम्॥

असल कमलनेत्रं जानकी प्रेमपात्रं, सजलजलद गात्रं पीतवस्त्रंदधानम्
उरसिच वनमालं कौस्तुभासक्तकंठं स्मितरुचिर विकाशं श्रीरामचन्द्रं भजेऽहं।

श्रीरामानन्द महं वन्दे योगिध्येयांघ्रि पंकजम्।
उदारयशसं देवं शान्तिमूर्तिं शुभ प्रदम्॥

हे सीते! जनकात्मजे! धरणिजे! श्रीरामध्यानान्विते।
हे ब्रह्मेश! सुरादि वृन्द नमिते! हे शोभिने रक्षमाम्॥ १॥
हे रामे! रघुनाथरूपरसिके! हे रासलीलान्विते।
हे रामांघ्रिरतेऽखिल जनैर्जानामि न त्वां विना॥ २॥
त्वां वन्दे रघुनाथ शोभिततनुं श्रीलीलया संयुतम्।
माधुर्यामृत पूरणं शशिमुखे क्रीड़ा सुधासागरम्॥ ३॥

श्रीवन्दे विदेह तनया पद पुण्डरीकं, कैशोरसौरभ समाहृत योगिचित्तम्।
हन्तुं त्रितापमनिशं मुनिहंस सेव्यं, सन्मानिसालि परिपीत पराग पुञ्जम्।४।
दुर्वादलं द्युति तनुं करुणाब्जनेत्रं हेमाम्बरम् बरविभूषण भूपिताङ्गम्।
कन्दर्पकोटि कमनीय किशोरमूर्तिं पूर्तिं मनोरथ भवाम्भज जानकीशम्॥

नीलाम्बुज श्यामल कोमलांगं सीता समारोपितवाम भागम्।
पाणौमहाशायक चारुचापं नमामिरामं रघुवंशनाथम्॥ ५॥

यस्यामलं नृपसदस्तुयशो धुनापि, गायन्तघघ्नमृपयो दिगिभेन्द्रपट्टम्।
तन्नाकपाल-बसुपाल किरीट जुष्टं पादाम्बुजं रघुपतेःशरणं प्रपद्ये॥ ६॥

ध्यायेदाजानु बाहुं धृतशरधनुषं बद्ध पद्मासनस्थं
पीतंवासो वसानं नव कमलदल स्पर्धिनेत्रं प्रसन्नम्।

वामांकारूढ़ सीतामुखकमल मिलल्लोचनं नीरदाभम्
नाना लंकारदीप्तं दधतमुरुजटामण्डलं रामचन्द्रम् ॥ ७ ॥

चरितं रघुनाथस्य शतकोटिप्रविस्तरम्।
एकैकमक्षरं पुंसां महापातक नाशनम् ॥ १ ॥

ध्यात्वा नीलोत्पलश्यामं श्रीरामं राजीवलोचनम्।
श्रीजानकीलक्ष्मणोपेतं जटामुकुटमण्डितम् ॥ २ ॥

सासितूणधनुर्बाणपाणिं नक्तंचरान्तकम्।
स्वलीलया जगत्त्रातुमाविर्भूतमजं विभुम् ॥ ३ ॥

रामरक्षां पठेत्प्राज्ञः पापघ्नीं सर्वकामदाम्।
शिरो मे राघवः पातु भालं दशरथात्मजः ॥४॥

कौशिल्येयो दृशौ पातु विश्वामित्र प्रियः श्रुती।
घ्राणं पातु मखत्राता मुखं सौमित्र वत्सलः ॥ ५ ॥

जिह्वां :विद्यानिधिः पातुकण्ठं भरतवन्दितः।
स्कन्धौ दिव्यायुधः पातु भुजौ भग्नेशकार्मुकः ॥६॥

करौ सीतापतिः पातु हृदयं जामदग्न्यजित्।
मध्यं पातु खरध्वंसी नाभि जाम्बवदाश्रयः ॥ ७ ॥

सुग्रीवेशः कटी पातु सक्थिनी हनुमत्प्रभुः।
उरू रघूत्तमः पातु रक्षःकुलविनाशकृत् ॥ ८ ॥

जानुनी सेतुकृत्पातु जंघे दशमुखान्तकः।
पादौ विभीषणश्रीदः पातु रामोऽखिलं वपुः ॥ ९ ॥

एतां रामबलोपेतां रक्षां यः सुकृती पठेत्।
स चिरायुः सुखी पुत्री विजयी विनयी भवेत् ॥१०॥

पातालभूतलव्योमचारिणश्छद्मचारिणः।
न द्रष्टुमपि शक्तास्ते रक्षितं रामनामभिः ॥ ११ ॥

रामेति रामभद्रेति रामचन्द्रेति वा स्मरन्।
नरो न लिप्यते पापैर्भुक्तिं मुक्तिंच विन्दति ॥१२॥
जगज्जैत्रैकमन्त्रेण रामनाम्नभि रक्षितम्।
यः कण्ठे धारयेत्तस्य करस्थाः सर्व सिद्धयः ॥१३॥
बज्र पंजर नामेदं यो राम कवचं स्मरेत्।
अव्याहताज्ञः सर्वत्र लभते जयमंगलम् ॥ १४ ॥
आदिष्ट वान्यथा स्वप्ने रामरक्षामिमां हरः।
तथा लिखित वान्प्रातः प्रबुद्धो बुध कौशिकः ॥१५॥
आरामः कल्पवृक्षाणां विरामः सकलापदाम्।
अभिरामस्त्रिलोकानां रामः श्रीमान्स नः प्रभुः ॥ १६ ॥
तरुणौ रूपसम्पन्नौ सुकुमारौ महाबलौ।
पुण्डरीकविशालाक्षौ चीरकृष्णाजिनाम्बरौ ॥ १७ ॥
फलमूलाशिनौ दान्तौ तापसौ ब्रह्मचारिणौ।
पुत्रौ दशरथस्यैतौ भ्रातरौ रामलक्ष्मणौ ॥ १८ ॥
शरण्यौ सर्वसत्वानां श्रेष्ठौ सर्वधनुष्मताम्।
रक्षःकुल निहन्तारौ त्रायेतां नो रघूत्तमौ ॥ १९ ॥
आत्तसज्जधनुषाविषुस्पृशा वक्षयाशुगनिषङ्गिनौ।
रक्षणाय मम रामलक्ष्मणा वग्रतः पथि सदैव गच्छताम् ॥ २० ॥
सन्नद्धः कवची खड्गी चापबाणधरो युवा।
गच्छन्मनोरथान्नश्च रामः पातु सलक्ष्मणः ॥ २१ ॥
रामो दाशरथिः शूरो लक्ष्मणानुचरो बली।
काकुत्स्थः पुरुषः पूर्णः कौशिल्येयो रघूत्तमः ॥ २२ ॥
वेदान्तवेद्यो यज्ञेशः पुराण पुरुषोत्तमः।
जानकीवल्लभः श्रीमानप्रमेयपराक्रमः ॥ २३ ॥

इत्येतानि जपेन्नित्यं मद्भक्तः श्रद्धयान्वितः।
अश्वमेधाधिकं पुण्यं-सम्प्राप्नोति न संशयः॥ २४ ॥
रामं दुर्वादलश्यामं पद्माक्षं पीतवाससम्।
स्तुवन्ति नामभिर्दिव्यैर्न ते संसारिणो नराः॥ २५ ॥
रामं लक्ष्मणपूर्वजं रघुवरं सीतापतिं सुन्दरं,
काकुत्स्थं करुणार्णवं गुणनिधं विप्रप्रियं धार्मिकम्।
राजेन्द्रं सत्यसन्धं दशरथतनयं श्यामलं शान्तिमूर्तिं,
वन्दे लोकाभिरामं रघुकुलतिलकं राघवं रावणारिम्॥ २६
रामाय रामभद्राय रामचन्द्राय वेधसे।
रघुनाथाय नाथाय सीतायाः पतये नमः॥ २७॥
श्रीराम राम रघुनन्दन राम राम श्रीराम राम भरताग्रज राम राम।
श्रीराम राम रणकर्कश राम राम श्रीराम राम शरणं भव राम राम॥
श्रीरामचन्द्रचरणौ मनसा स्मरामि श्रीरामचन्द्रचरणौ वचसागृणामि।
श्रीरामचन्द्रचरणौ शिरसा नमामि श्रीरामचन्द्रचरणौ शरणं प्रपद्ये॥
माता रामो मत्पिता रामचन्द्रः स्वामी रामो मत्सखा रामचन्द्रः।
सर्वस्वं मे रामचन्द्रो दयालुर्नान्यं जाने नैव जाने न जाने॥ ३०
दक्षिणे लक्ष्मणो यस्य वामे च जनकात्मजा।
पुरतो मारुतिर्यस्य तं वन्दे रघुनन्दनम्॥ ३१॥
लोकाभिरामं रणरंगधीरं राजीवनेत्रं रघुवंशनाथम्।
कारुण्यरूपं करुणाकरं तं श्रीरामचन्द्रं शरणंप्रपद्ये॥३२॥
मनोजवं मारुततुल्यवेगं जितेन्द्रियं बुद्धिमतां वरिष्ठम्।
वातात्मजं वानरयूथमुख्यं श्रीरामदूतं शरणं प्रपद्ये॥३३॥
कूजन्तं रामरामेति मधुरं मधुराक्षरम्।
आरुह्य कविताशाखां वन्दे वाल्मीकिकोकिलम्॥ ३४॥

आपदामपहर्तारं दातारं सर्वसम्पदाम् ।
लोकाभिरामं श्रीरामं भूयो भूयो नमाम्यहम् ॥ ३५ ॥
भर्जनं भवबीजानामर्जनं सुखसम्पदाम् ।
तर्जनं यमदूतानां श्रीरामरामेति गर्जनम् ॥ ३६ ॥
रामो जणिरामः सदा विजयते रामं रमेशं भजे
रामेणाभिहता निशाचरचमू रामाय तस्मै नमः ॥३७॥
रामान्नास्ति परायणं परतरं रामस्य दासोऽस्म्यहं
रामे चित्तलयः सदा भवतु मे भो राममामुद्धर ॥ ३८ ॥

राम रामेति रामेति रमे रामे मनोरमे ।
सहस्त्रनाम तत्तुल्यं श्रीरामनाम वरानने ॥ ३९ ॥

उल्लंघ्यसिंधो सलिलं सलीलं यश्शोक वह्नि जनकात्मजायाः ।
आदायते नैवददाह लङ्कां नमामि तं प्राञ्जलिरांजनेयम् ॥४० ॥
ध्येयं सदा परिभवघ्नमभीष्टदोहं तीर्थास्पदं शिवविरंचिनुतं शरण्यम् ।
भृत्यार्तिहं प्रणतपाल भवाब्धिपोतं बन्दे महापुरुषते चरणारविन्दम् ॥
त्यक्त्वा सुदुस्त्यजसुरेप्सित राज्यलक्ष्मीं धर्मिष्ठ आर्यवचसा यदगादरण्यम् ।
मायामृगंदयितयेप्सित मन्वधावत् वन्देमहापुरुष ते चरणारविन्दम् ॥

श्रीकमला पत्यष्टकस्तोत्र

नमामि रामानुज पादपंकजं वदामि रामानुज नामनिर्मलम् ।
स्मरामि रामानुज दिव्य विग्रहं, करोमि रामानुजपूजनं सदा ॥

भुजगतल्प गतं घनसुन्दरं गरुड़ वाहनमम्बुज लोचनम् ।
नलिनचक्रगदाकरमव्ययं भजतरे मनुजाः कमलापतिम् ॥१॥
अलिकुलासितकोमलकुन्तलं विमलपीतदुकूलमनोहरम् ।
जलधिजाङ्कितवामकलेवरं भजतरे मनुजाः कमलापतिम् ॥२॥
किमु जपैश्च तपोभिरुताध्वरैरपि किमुत्तमतीर्थ निषेवणैः ।

किमुत शास्त्रकदम्ब विलोकनैर्भजतरे मनुजा कमलापतिम् ॥ १ ॥
मनुजदेहमिमं भुवि दुर्लभं समधिगम्य सुरैरपि वाञ्छितम्।
विषयलम्पटतामपहाय वै भजतरे मनुजाः कमलापतिम् ॥ २ ॥
न वनिता न सुतो न सहोदरो न हि पिता जननी न च बान्धवः।
व्रजति साकमनेन जनेन वै भजतरे मनुजाः कमलापतिम् ॥ ३ ॥
सकलमेव चलं सचराचरं जगदिदं सुतरां धनयौवनम्।
समवलोक्य विवेकदृशा द्रुतं भजतरे मनुजाः कमलापतिम् ॥ ४ ॥
विविधरोगयुतं क्षणभंगुरं परवशं नवमार्गमलाकुलम्।
परिनिरीक्ष्य शरीरमिदं स्वकं भजतरे मनुजाः कमलापतिम् ॥ ५ ॥
मुनिवरैरनिशिं हृदि भावितं शिवविरञ्च महेन्द्रनुतंसदा।
मरण जन्मजराभयमोचनं भजत रे मनुजाः कमलापतिम् ॥ ६ ॥

श्रीदशावतारस्तोत्रम्

प्रलयपयोधिजले धृतवानसि वेदम्। विहितवहित्रचरित्रमखेदम् ॥ केशव धृतमीनशरीर जय जगदीश हरे ॥ १ ॥ क्षितिरतिविपुलतरे तव तिष्ठति पृष्ठे। धरणि धरणकिणचक्रगरिष्ठे। केशव धृत-कच्छपरूप जय जगदीश हरे ॥ २ ॥ वसति दशनशिखरे धरणी तव लग्ना। शशिनि कलङ्ककलेव निमग्ना ॥ केशव धृतशूकररूप जय जगदीश हरे ॥ ३ ॥ तव करकमलवरे नखमद्भुतशृङ्गम् ॥ दलितहिरण्यकशिपुतनुभृङ्गम् ॥ केशव धृतनरहरिरूप जय जग-दीश हरे ॥ ४ ॥ छलयसि विक्रमणे बलिमद्भुतवामन। पदनखनीर-जनित-जन पावन ॥ केशव धृत वामनरूप जय जगदीश हरे ॥५॥ क्षत्रियरुधिरमये जगदपगतपापम्। स्नपयसि पयसि शमितभव-तापम् ॥ केशव धृतभृगुपतिरूप जय जगदीश हरे ॥ ६ ॥ वित-रसि दिक्षु रणेदिक्पतिकमनीयम्। दशमुखमौलिबलिं रमणीयम् ॥

केशव धृतरघुपतिवेष जय जगदीश हरे ॥ ७ ॥ वहसि वपुषि विशदे वसनं जलदाभम्। हलहति भीतिमिलितयमुनाभम् ॥ केशव धृतहलधररूप जय जगदीश हरे ॥ ८ ॥ निन्दसि यज्ञविधेरहह श्रुतिजातम्। सदयहृदयदर्शितपशुघातम् ॥ केशव धृतबुद्धशरीर जय जगदीश हरे ॥ ६ ॥ म्लेच्छनि वहनिधने कलयसि करवालम्। धूमकेतुमिव किमपि करालम् ॥ केशव धृतकल्किशरीर जय जगदीश हरे ॥ १० ॥ श्रीजयदेवकवेरिदमुदितमुदारम् शृणु सुखदं सुभदं भवसारम् ॥ केशव धृतदशविधिरूप जय जगदीश हरे ॥ ११ ॥

सुन्दरगोपालम् उरवनमालं नयन विशालं दुःखहरम्।
श्रीवृन्दावनचन्द्रं आनँदकन्दं परमानन्दं धरणिधरम् ॥
वल्लभघनश्यामं पूर्णकामम् अत्यभिरामं प्रीतिकरम्।
भजि नन्दकुमारं सर्वसुखसारं तत्वविचारं ब्रह्मपरम् ॥
सुन्दरवारिजवदनं निर्जितमदनं आनँदसदनं मुकुटधरम्।
गुञ्जाकृतिहारं विपिनविहारं परमोदारं चीरहरम्।
वल्लभपटपीतं कृतउपवीतं करनवनीतं विबुधवरम्। सुन्दर०॥

श्रीशिवरामाष्टस्तोत्रम्

शिव हरे शिव राम सखे प्रभो त्रिविधितापनिवारण हे विभो।
अज जनेश्वर यादव पाहि मां शिव हरे विजयं कुरु मे वरम् ॥१॥
कमललोचन राम दयानिधे हर गुरो गजरक्षक गोपते।
शिवतनो भव शङ्कर पाहि मां शिव हरे विजयं कुरु मे वरम् ॥२॥
सुजनरञ्जन मङ्गलमन्दिरं भजति ते पुरुषः परमं पदम्।
भवति तस्य सुखं परमद्भुतं शिव हरे विजयं कुरु मे वरम् ॥३॥
जय युधिष्ठिरवल्लभ भूपते जय जयार्जितपुण्यपयोनिधे।

अवनिमण्डल मङ्गल मापते जलद सुन्दर राम रमापते।
निगमकीर्तिगुणार्णव गोपते शिव हरे विजयं कुरु मे वरम् ॥ ६ ॥
पतितपावन नाममयी लता तव यशो विमलं परिगीयते।
तदपि माधव माँ किमुपेक्षसे शिव हरे विजयं कुरु मे वरम् ॥७॥
अमरतापरदेव रमापते विजयतस्तव नामधनोपमा।
मयि कथं करुणार्णव जायते शिव हरे विजयं कुरु मे वरम् ॥ ८ ॥
हनुमतः प्रिय चापकर प्रभो सुरसरिद्धृतशेखर हे गुरो।
मम विभो किमु विस्मरणं कृतं शिव हरे विजयं कुरु मे वरम् ॥९॥
अहरहर्जनरञ्जनसुन्दरं पठति यः शिवरामकृतं स्तवम्।
विशति रामरमाचरणाम्बुजे शिव हरे विजयं कुरु मे वरम् ॥१०॥

चर्पटपञ्जरीकास्तोत्रम्

दिनमपि रजनी सायं प्रातः शिशिरवसन्तौ पुनरायातः।
कालः क्रीडति गच्छत्यायुस्तदपि न मुञ्चत्याशावायुः ॥ १ ॥
भजि गोविन्दं भजि गोविन्दं गोविन्दं भजि मूढमते।
प्राप्ते सन्निहते मरणे नहिं नहिं रक्षति डुकृञ् करणे॥
अग्रे वह्निः पृष्ठे भानू रात्रौ चिबुकसमर्पितजानुः।
करतलभिक्षा तरुतलवासस्तदपि न मुञ्चत्याशापाशः ॥ भज० ॥
यावद्वित्तोपार्जनसक्तस्तावन्निजपरिवारो रक्तः।
पश्चाद्धावति जर्जरदेहे वार्तां पृच्छति कोऽपि न गेहे ॥३ भ० ॥
जटिलो मुण्डी लुञ्चितकेशः काषायाम्बरबहुकृतवेषः।
पश्यन्नपि च न पश्यति लोको ह्युदरनिमित्तं बहुकृतशोकः ॥
भगवद्गीता किञ्चिदधीता गङ्गाजललवकणिका पीता।
सकृदपि यस्य मुरारिसमर्चा तस्य यमः किं कुरुते चर्चाम् ॥ ५ ॥
अङ्गं गलितं पलितं मुण्डं दशनविहीनं जातं तुण्डम्।

वृद्धो याति गृहीत्वा दण्डं तदपि न मुञ्चत्याशापिण्डम् ॥६भ०॥
बालस्तावत्क्रीड़ासक्तस्तरुणस्तावत्तरुणीरक्तः।
वृद्धस्तावच्चिन्तामग्नः पारे ब्रह्मणि कोऽपि न लग्नः॥ ७ भ० ॥
पुनरपि जननं पुनरपि मरणं पुनरपि जननी जठरे शयनम्।
यह संसारे खलु दुस्तारे कृपया पारे पाहि मुरारे॥ ८ भ० ॥
पुनरपि रजनी पुनरपि दिवसः पुनरपि पक्षः पुनरपि मासः।
पुनरप्ययनं पुनरपि वर्षं तदपि न मुञ्चत्याशा मर्षम् ॥ ९ भ० ॥
वयसि गते कः काम विकारः शुष्के नीरे कः कासारः।
नष्टे द्रव्ये कः परिवारो ज्ञाते तत्त्वे कः संसारः॥ १० ॥
नारीस्तनभरनाभिनिवेशं मिथ्यामायामोहावेशम्।
एतन्मांसवसादिविकारं मनसि विचारय वारम्वारम् ॥११ भ० ॥
कस्त्वं कोऽहंकुत आयातः का मे जननी को मे तातः।
इति परिभावय सर्वमसारं विश्वं त्यक्त्वा स्वप्नविचारम् ॥१२॥
गेयं गीतानामसहस्रं ध्येयं श्रीपतिरूपमजस्रम् ।
नेयं सज्जनसङ्गे चित्तं देयं दीन जनाय च वित्तम्॥ १३ भ० ॥
यावज्जीवो निवसति देहे कुशलं तावत्पृच्छति गेहे।
गतवति वायौ देहापाये भार्या बिभ्यति तस्मिनन्काये ॥ १४॥
सुखतः क्रियते रामाभोगः पश्चाद्धन्त शरीरे रोगः।
यद्यपि लोके मरणं शरणं तदपि न मुञ्चति पापाचरणम्॥ १५ ॥
रथ्याचर्पट बिरचितकन्थः पुण्यापुण्यविवर्जितपन्थः।
नाहं न त्वं नायं लोकस्तदपि किमर्थं क्रियते शोकः॥ १६ ॥
कुरुते गङ्गासागरगमनं व्रतपरिपालनमथवा दानम्।
ज्ञानविहीनः सर्वमतेन मुक्ति न भवति जन्मशतेन॥ १७ भ० ॥

श्रीगङ्गास्तोत्रम्

देवि सुरेश्वरि भगवति गङ्गे त्रिभुवन तारणि तरलतरङ्गे ।
शङ्करमौलि विहारिणि विमले मम मतिरास्तां तवपदकमले ॥ १ ॥
भागीरथि सुखदायिनि मातस्तव जलमहिमा निगमेख्यातः ।
नाहं जाने तव महिमानं पाहि कृपामयि मामज्ञानम् ॥ २ ॥
हरिपदपाद्यतरङ्गिणि गङ्गे हिमविधुमुक्ताधवल तरङ्गे ।
दूरीकुर मम दुष्कृतिभारं कुरु कृपयामयि मामज्ञानम् ॥ २ ॥
तव जलममलं येन निपीतं परमपदं खलुतेन गृहीतम् ।
मातर्गङ्गे त्वयि यो भक्तः कलि तं द्रष्टुं न यमः शक्तः ॥ ४ ॥
पतितोद्धारणि जाह्नवि गङ्गे खण्डितगिरिवरमण्डितभङ्गे ।
भीष्मजननि हे मुनिवरकन्ये पतितनिवारिणि त्रिभुवनधन्ये ॥५॥
कल्पलतामिव फलदां लोके प्रणमति यस्त्वां पतति न शोके ।
पारावारविहारिणि गङ्गे विमुखयुवतिकृततरलापांगे ॥ ६ ॥
तवचेन्मातः स्रोतः स्नातः पुनरपि जठरे सोऽपि न जातः ।
नरकनिवारिणि जाह्नवि गङ्गे कलुषविनाशिनि महिमोत्तुङ्गे ॥७॥
पुनरसदङ्गे पुण्यतरङ्गे जय जय जाह्नवि करुणापांगे ।
इन्द्रमुकुटमणिराजितचरणे सुखदे शुभदे भृत्यशरण्ये ॥ ८ ॥
रोगं शोकं तापं पापं हर मे भगवति कुमतिकलापम् ।
त्रिभुवनसारे वसुधाहारे त्वमसि गतिर्मम खलु संसारे ॥ ९ ॥
अलकानन्दे परमानन्दे कुरु करुणामय कातरवन्द्ये ।
तव तटनिकटे यस्य निवासः खलु वैकुण्ठे तस्य निवासः ॥ १० ॥
वरमिह नीरे कमठो मीनः किंवा तीरे शरटः क्षीणः ।
अथवा श्वपचो मलिनो दीनस्तव नहिं दूरे नृपतिकुलीनः ॥ १० ॥
भो भुवनेश्वरि पुण्ये धन्ये देवि द्रवमयि मुनिवर कन्ये ।

गंगास्तवमिदममलं नित्यं पठति नरो यः स जयति सत्यम् ॥१२॥
येषां हृदये गङ्गाभक्तिस्तेषां भवति सदा सुखमुक्तिः।
मधुराकान्ता पज्झटिकाभीः परमानन्दकलितललिताभिः ॥ १३ ॥
गङ्गास्तोत्रमिदं भवसारं वांछितफलदं विमलंसारम्।
शङ्करसेवकशङ्कररचितं पठति सुखी स्तव इति च समाप्तः ॥१४॥

नान्यास्पृहा रघुपते हृदयेऽस्मदीये सत्यं वदामि च भवानखिलान्तरात्मा।
भक्तिं प्रयच्छ रघुपुङ्गवनिर्भरामे कामादि दोष रहितं कुरु मानसं च॥
न धर्म निष्ठोऽस्मि न चात्मवेदी न भक्ति मांस्त्वच्चरणार्विन्दे।
अकिंचनोऽनन्य गतिं शरण्यं त्वत्पादमूलं शरणं प्रपद्ये ॥ ६ ॥
त्वमेव माता च पिता त्वमेव, त्वमेव बन्धुश्च सखात्वमेव।
त्वमेव विद्या द्रविणं त्वमेव, त्वमेव सर्वं ममदेवदेव॥
अपराध सहस्रभाजनं पतितं भीमभवार्णवोदरो,
अगतिशरणागतं हरे कृपया केवलमात्मसात्कुरु॥
त्वच्चरणावलीं भक्ति त्वज्जनानाञ्च संगमः।
देहिराम कृपा सिन्धो मह्यञ्जन्मनिजन्मनि॥
आदौ रामतपोवनादिगमनं हत्वा मृगं कांचनम्।
वैदेहीहरणं जटायु मरणं सुग्रीवसम्भाषणम्॥
वालिनिर्दलनं समुद्रतरणं लङ्कापुरीदाहनम्।
पश्चाद्रावण कुम्भकर्ण हननं चैतद्धि रामायणम्॥
आदौ देवकिदेवि गर्भजननं गोपीगृहे वर्द्धनम्।
मायापूतन जीवतापहरणं गोवर्द्धनोद्धारणम्॥
कंसच्छेदन कौरवादि हननं, कुन्तीसुतापालनम्।
एतद्भागवतं पुराणकथितं श्रीकृष्णलीलामृतम्॥
शान्ताकारं भुजग शयनं पद्मनाभं सुरेशम्।

विश्वाधारं गगनसदृशं मेघवर्णं शुभांगम् ॥
लक्ष्मीकान्तं कमलनयनं योगिभिर्ध्यानगम्यं ।
वन्दे विष्णुं भवभयहरं सर्व लोकैकनाथम् ॥
हे रामः पुरुषोत्तमा नरहरे नारायण केशवा ।
गोविन्द गरुड़ध्वज गुणनिधे दामोदर माधव ॥
हे कृष्ण कमलापते यदुपते सीतापते श्रीपते ।
वैकुण्ठाधिपते चराचरपते लक्ष्मींपते पाहिमाम् ॥
कस्तूरी तिलकंललाटपटले वक्षःस्थले कौस्तुभम् ।
नाशाग्रे वर मौक्तिकं करतले वेणुः करे कंकणम् ॥
सर्वाङ्गे हरिचन्दनं सुललितं कण्ठे च मुक्तावली ।
गोपस्त्री परिवेष्टितो विजयते गोपालचूड़ामणिः ॥

श्रीरामनाम परत्व ।

सावित्रीब्रह्मणासार्द्धं लक्ष्मीर्नारायणेनच ॥
शम्भुनारामरामेति पार्वतीजपतीस्फुटम् ॥ २ ॥
प्रायश्चितेषुसर्वेषु रामनाम जपंपरम् ॥
यतीनांरामभक्तानां सर्वरीत्याविशिष्यते ॥ ३ ॥
श्रीरामेतिपरंजाप्यं तारकंब्रह्मसंज्ञकम् ॥
ब्रह्महत्यादिपापघ्न मितिवेदविदोविदुः ॥ ४ ॥
श्रीरामरामेतिजना ये जपंतिचसर्वदा ॥
तेषांभुक्तिश्चमुक्तिश्च भविष्यति न संशयः ॥ ५ ॥
रामनाम्नः समुत्पन्नः प्रणवोमोक्षदायकः ॥
रूपतत्त्वमसेश्चासौ वेदतत्त्वाधिकारिणः ॥ ६ ॥
प्रसंगेनापि श्रीराम नामनित्यं वदन्तिये ॥
तेकृतार्था मुनिश्रेष्ठ सर्वदोषोद्गताः सदा ॥ १ ॥

रामनाम सदा पुण्यं नित्यं पठति योनरः,
अपुत्रो लभते पुत्रं सर्वकामफलप्रदम् ।
रामनामामृतंस्तोत्रं सायं प्रातः पठेन्नरः ।
गोघ्नस्त्री बालघाती च सर्वपापैः प्रमुच्यते ॥
वेदानां सारसिद्धान्तं सर्व सौख्यैक कारणम् ।
रामनाम परंब्रह्म सर्वेषां प्रेमदायकम् ॥
तेनतप्तं हुतं दत्तं मेवाखिलं तेन सर्वंकृतं कर्मजालं ।
येन श्रीरामनामामृतंपानकृत मनिशमनवद्यमवलोक्य कालं ॥
येन दत्तं हुतं तप्तं सदा विष्णु समर्चितम् ।
जिह्वाग्रे वर्तते यस्य राम इत्यक्षरद्वयम् ॥
सप्त कोटि महामन्त्राश्चित-विभ्रम कारकाः ।
एक एव परोमन्त्रः श्रीरामेत्यक्षरद्वयम् ॥
श्रीरामरामरामेति येवदन्त्यपि पापिनः ।
पाप कोटि सहस्रेभ्यस्तेषांमुद्धरणं क्षणात् ॥
मत्कृता याभवेद्बाधा महादुखौघदायनी ।
रामनाम जपात्साहि मुच्यते स्वल्प कालतः ॥
ज्ञानानां परमं ज्ञानं ध्यानानां परमोलयः ।
योगानां परमोयोगः श्रीरामनामानुकीर्तनम् ॥
प्रमादादपिसंस्पृष्टो यथानलकणोदहेत् ।
तथौष्ठपुट-संस्पृटं रामनाम दहेधघम् ॥
जपतः सर्व वेदांश्च-सर्वमन्त्राश्च पार्वती ।
तस्मात्कोटि गुणं पुण्यं श्रीरामनाम्नैव लभ्यते ॥
मंगलानि गृहे तस्य सर्व सौख्यानि भारतः ।
अहोरात्रं चयेनोक्तं श्रीराम इत्यक्षरद्वयम् ॥

भजस्व कमलेनित्यं नाम सर्वेश पूजितम् ।
श्रीरामेति मधुरं साक्षान्मयासंकीर्त्यतेहृदि ॥
ध्येयं ज्ञेयं परमसेव्यं रामनामाक्षरमुने ।
सर्व सिद्धान्त सारंहि सौख्यं सौभाग्य कारणम् ॥
सर्वदा सर्वकालेषु येन कुर्वन्ति पातकः ।
श्रीरामनामजपं कृत्वा यान्तिधाम सनातनम् ॥
यश्चांडालोऽपि रामेति वाचं वदेत् ।
तेनसह संवसेत् तेनसह संवदेत् तेनसह संभुञ्जीत ॥
विना भक्तिं न मुक्तिश्च भुजमुत्थाय चोच्यते ।
यूयं धन्या महाभागः येषांप्रीतिस्तु राघवे ॥
कुलं पवित्रं जननी कृतार्था वसुन्धरा भाग्यवती च धन्यः ।
स्वर्गेपि तेषां पितरोपि धन्या येषांकुले वैष्णवनामधेयम् ॥
धनुर्वाणादि चिन्हानां धारकं तिलकान्वितं ।
तुलसीकाष्ठमालाढ्यां तं जानीत सुवैष्णवः ॥
व्याधस्याचरणं ध्रुवस्य च वयो विद्या गजेन्द्रस्य का ।
कुब्जायाः किमुनामरूपमधिकं किंतत्सुदाम्नो धनम् ॥
वंशः को विदुरस्य यादवपतेरुग्रस्य किं पौरुषम् ।
भक्त्या तुष्यति केवलं न च गुणै, र्भक्तिः प्रियो माधवः ॥
धनानि भूमौ पशवश्च गोष्ठे नारी गृहद्वारि जनास्मसाने ।
देहश्चितायां परलोक मार्गे धर्मानुगोगच्छति जीव एकः ॥
यस्मिन् शास्त्रे पुराणे च हरिनाम न दृश्यते ।
श्रोतव्यं नैव तच्छास्त्रं यदि ब्रह्मा स्वयं वदेत् ॥
येस्मरन्ति च गोविन्दं सर्व काम फलप्रदम् ।
तापत्रय विनिर्मुक्ता जायन्ते दुःख वर्जिताः ॥

न भयं यमदूतानां न भयं रौरवादिकम् ।
न भयं प्रेतराजस्य श्रीमन्नामानुकीर्तनात् ॥
ये नराधम लोकेषु रामभक्ति पराङ्मुखाः ।
जपं तपं दया शौचं शास्त्राणामवगाहनम् ॥
राम नाम समं तत्वं नास्ति वेदान्त गोचरम् ।
यत्प्रसादात्परां सिद्धिं सम्प्राप्ता मुनयो मलाम् ॥
श्रद्धया हेलया नाम वदन्ति मनुजा भुवि ।
तेषां नास्ति भयं पार्थ श्रीरामनाम प्रसादतः ॥
'परं ब्रह्म ज्यौतिर्मयं नाम उपास्यं मुमुक्षुभिः ॥श्रुति॥
रामनाम जपेनैव ब्रह्म प्राप्ति र्न संशय ॥श्रुति॥
श्रीराम नाम प्रभावेण श्रीरामं परमेश्वरम् ।
साक्षात्कारं प्रपश्यन्ति रामनामार्थ चिन्तका ॥
सर्वेवताराः श्रीरामनाम-शक्ति समुद्भवाः ।
सत्यं वदामि देवेशि नाम महात्म्यमद्भुतम् ॥
अहंच शङ्करो विष्णु स्तथा सर्वे दिवौकसः ।
राम नाम प्रभावेण संप्राप्ताः सिद्धि मुत्तमाम्
ब्राह्माण्डं नाम संख्यानं ब्रह्माविष्णुहरात्मनाम् ।
उद्भवे प्रलये हेतू राम एव इति श्रुतः ॥
मधुर मधुर मेतन्मंगलं मङ्गलानाम् ।
सकल निगमवल्ली तत्फलं चित्स्वरूपम् ।
सकृदपिपरिगीतं श्रद्धया हेलया वा
स भवति भवपारं रामनामानुभावात् ॥
शान्तं शाश्वतमप्रमेयमनघं, निर्वाणशान्तिप्रदम्,
ब्रह्माशम्भु फणीन्द्र सेव्य मनिशं, वेदान्तवेद्यं विभुम् ।

रामाख्यं जगदीश्वरं सुरगुरुं मायामनुष्यंहरिम्,
वन्देहं करुणाकरं रघुवरं भूपालचूड़ामणिम् ॥

यः पृथ्वी भववारणाय दिविजैः सम्प्रार्थितश्चिन्मयः
सञ्जातः पृथ्वीतले रविकुले माया मनुष्योऽव्ययः
निश्चक्रं हतराक्षसां जगद्गाद् ब्रह्मत्वमाद्यं स्थिरम्
कीर्तिं पापहरां विधाय जगतां तं श्रीजानकीशं भजे ॥

राम नाम प्रभावेण, स्वयम्भू सृजते जगत् ।
विभर्ति सकलं विष्णुः शिव संहरते पुनः ॥

अहं भवन्नाम जपन् कृतार्थौ, वसामि काश्यां मनिशं भवान्या ।
मुमूर्ण माणस्य विमुक्त येऽहं दिशामि मन्त्रं तव रामनामः ॥

रामनाम प्रभा दिव्या वेद वेदान्तपारगा ।
येषां स्वान्ते सदा भाति ते पूज्या भुवनत्रये ॥

दृष्टवा श्रीरामनाम्नस्तु जापकं ध्यान तत्परम् ।
अभ्युत्थानं सदा स्नेहात् करिष्येहं महामुने ॥

नतत्पुराणं नहिं यत्र रामो, यस्यां न रामो नहिं संहितासा ।
स नेतिहासो नहिं यत्र रामः काव्यं न तत्स्यान्नहि यत्र राम ॥
शास्त्रं तस्यान्नहिं यत्र रामः, तीर्थं न यद्यत्र नहिं रामचन्द्रः ।
यागः स आगो नहिं यत्र रामः, योग स रोगों नहिं यत्र रामः ॥

षष्ठिवर्षसहस्त्राणि विष्णोराराधनेफलं ।
सकृत् वैष्णव पूजायां लभते नात्र संशयः ॥

किं तस्य दानः किं तीर्थः किं यज्ञैर्विधिवत्कृतैः ।
फलं संप्राप्यते सर्वं विष्णुभक्ताभि पूजनात ॥

वैष्णवो यदगृहे भुङ्क्ते तत्र भुङ्क्ते हरिः स्वयम् ।
हरिर्यस्य गृहे भुङ्क्ते तत्र भुङ्क्ते जगत्त्रयम ॥

वसुदेवसुतं देवं कंसचाणूरमर्दनम् ।
देवकी परमानन्दं कृष्णं वन्दे जगद्गुरुम् ॥१ ॥

वंशीविभूषित-करान्नव नीरदाभात,
पीताम्बरादरुणबिम्बफलाधरोष्ठात् ।
पूर्णेन्दुसुन्दरमुखादरविन्दनेत्रात्,
कृष्णात्परं किमपि तत्वमहं न जाने ॥ २ ॥

गोविन्दं गोकुलानन्दं वेणुवादनतत्परम् ।
राधिकारञ्जनं श्यामं वन्दे गोपालनन्दनम् ॥ ३ ॥
फुल्लेन्दीवरकान्तिमिन्दुबदनम् वर्हावतंसप्रियं,
श्रीवत्सांकमुदारकौस्तुभधरं पीताम्बरं सुन्दरम् ।
गोपीनांनयनोत्पलार्चिततनुं गोगोपसंघावृतं,
गोविन्दं कलवेणुवादनपरं दिव्यांगभूषं भजे ॥ ४ ॥
गोविन्द गोविन्द हरे मुरारे, गोविन्द गोविन्द रथांगपाणे ।
गोविन्द गोविन्द मुकुन्द कृष्ण गोविन्द दामोदर माधवेति ॥
गुशब्दस्त्वन्धकार, स्याद्रुशब्दस्तन्निरोधकः ।
अन्धकार निरोधित्वाद् गुरु रित्याभिधीयते ॥ ५ ॥
१—श्रीरामचन्द्र कृपालु भजि मन हरण भवभय दारुणम् ।
नवकंजलोचन कञ्जमुखकरकञ्ज पदकञ्जारुणम् ॥
कन्दर्प अगणित अमित छवि नव नीलनीरज सुन्दरम् ।
पट पीत मानहुँ तड़ित रुचि शुचि नौमि जनक सुतावरम् ॥
भजि दीनवन्धु दिनेश दानव दैत्यवंश निकन्दनम् ।
रघुनन्द आनँदकन्द कौशलचन्द दशरथनन्दनम् ॥
शिर मुकुट कुण्डल तिलक चारु उदार अंग विभूषणम् ।
आजानुभुज शरचाप धर संग्राम जितखरदूषणम् ।

इति वदत तुलसीदास शंकर शेष मुनिमन रञ्जनम् ॥
मम हृदयकञ्ज निवास करि कामादि खलदलगञ्जनम् ॥

२—जय जनक नन्दनि जक्त वन्दनि जन अनन्दनि जानकी ।
श्रीरघुवीर नयन चकोर चन्दनि वल्लभा प्रिय प्राणकी ॥
तव कञ्ज पद मकरन्द शोभित योगिजन ममअलिकिये ।
करि पान गनत न आन हिय निर्वाण पद आनत हिये ॥
सुख खानि मंगल दानि जो जिय जानि शरण जो जात हैं ।
तव नाथ सब सुख साथ करि तेहि हाथ रीझि विकात हैं ॥
ब्रह्मादि शुक सनकादि सुर मुनि आदि निजमुख भाषहीं ।
तव कृपा नयन चकोर चितवनि दिवसनिशि अभिलाषहीं ॥
तन पाय तुमहिं विहाय जड़मति आन मानत देवहीं ।
हतभाग्य सुरतरु त्यागि शठ अनुराग रेणहि सेवहीं ॥
यह आश रघुवरदासकी सुखराशि पूरणकीजिये ।
निज चरणकमलसनेह जनक विदेहजा बर दीजिये ॥

॥ श्रीरामजीका निवासस्थान कहाँ पर है ॥

सुनहु राम अब कहौं निकेता । बसहु जहाँ सिय लषण समेता ।
जिनके श्रवण समुद्र समाना । कथा तुम्हारि सुभग सरि नाना ॥
भरहिं निरन्तर होंहि न पूरे । तिनके हृदय सदन तब रूरे ॥१॥
लोचन चातक जिन करि राखे । रहहिं दरश जलधर अभिलाषे ।
तुमहिं निवेदित भोजन करहीं । प्रभुप्रसाद पट भूषण धरहीं ॥
शीश नवहिं सुर गुरु द्विज देखी । प्रीतिसहित करि विनयविशेषी
कर नित करहिं रामपद पूजा । राम भरोस हृदय नहीं दूजा ॥
चरण रामतीरथ चलि जाहीं । राम बसहु तिनके मन माहीं ॥२॥
मंत्रराज नित जपहिं तुम्हारा । पूजहिं तुमहिं सहित परिवारा ।

तर्पण होम करहिं विधि नाना। विप्र जिमाय देहिं वहु दाना॥
तुमते अधिक गुरुहिं जिय जानी। सकल भाव सेवहिं सनमानी।
दो०—सब कर मागहिं एक फल, रामचरणरति होउ।
तिनके मन मन्दिर वसहु, सियरघुनन्दन दोउ॥३॥
काम क्रोध मद मान न मोहा। लोभ न छोभ न राग न द्रोहा॥
जिनके कपट दम्भ नहिं माया। तिनके हृदय वसहु रघुराया॥४॥
सबके प्रिय सबके हितकारी। दुख सुख सरिस प्रशंसा गारी॥
कहहिं सत्य प्रिय बचन विचारी। जागत सोवत शरण तुम्हारी।
तुमहिं छांड़ि गति दूसर नाहीं। राम वसहु तिनके मन माहीं॥५॥
जननी सम जानहिं पर नारी। धन पराय विषते विष भारी॥
जे हरषहिं पर सम्पति देखो। दुखित होंहिं पर विपति विशेषी।
अवगुण तजि सबके गुण गहहीं। विप्र धेनु हित संकट सहहीं॥
नीति निपुण जिनकी जगलीका; घर तुम्हार तिनकरमन नीका।६
गुण तुम्हार समझहिं निज दोषू। जेहि सब भाँति तुम्हार भरोसू।
रामभक्त प्रियलागहिं जेही। तेहि उर वसहु सहित वैदेही॥७॥
जाति पांति धन धर्म बढ़ाई। प्रिय परिवार सदन समुदाई।
सब तजि तुमहिं रहैं लवलाई। तिनके हृदय बसहु रघुराई॥८॥
दो०—कर्म वचन मन छाँड़ि छल, जब लगि जन न तुम्हार।
तब लगि सुख स्वप्नेहुँ नहीं, किये कोटि उपचार॥

नवधा भक्ति

प्रथम भक्ति संतन कर संगा। दूसरि रति मम कथा प्रसंगा॥
दो०— गुरुपद पंकज सेवा, तीसरि भक्ति अमान।
चौथि भक्ति मम गुणगण, करै कपट तजि गान॥
मन्त्र जाप मम दृढ़ विश्वासा। पंचम भजन सो वेद प्रकाशा।
षट दम, शील, विरति, वहु कर्मा, निरत निरन्तर सज्जन धर्मा॥

सप्तम मोहिमय सब जग देखै। मोते अधिक संत करि लेखै॥
अष्टम यथा लाभ संतोषा। सपनेहुँ नहिं देखै परदोषा॥
नवम सरल सबसों छलहीना। मम भरोस हिय हर्ष न दीना॥
नव महँ जिनके एकहु होई। नारि पुरुष सचराचर कोई॥
सो अतिशय प्रिय भामिनि मोरे। सकल प्रकार भक्तिदृढ़ तोरे॥

॥ श्रीराम गीता ॥

बड़े भाग्य मानुष तन पावा। सुर दुर्लभ सद् ग्रंथन गावा॥
साधन धाम मोक्ष कर द्वारा। पाइ न जेहि परलोक सँभारा॥
दो०—सो परत्र दुख पावहि, शिर धुनि धुनि पछिताय।
कालहि कर्महिं ईश्वरहि, मिथ्या दोष लगाय॥
यहि तनकर फल विषय न भाई। स्वर्गहु स्वल्प अन्त दुखदाई॥
नर तन पाय विषय मन देहीं। पलटि सुधा ते शठ विष लेहीं॥
ताहि कबहुँ भल कहै न कोई। गुंजा गहै परसमणि खोई॥
आकर चार लाख चौरासी। योनिनु भ्रमत जीव अविनाशी॥
फिरत सदा मायाके प्रेरे। काल कर्म स्वभाव गुण घेरे॥
कबहुँक करि करुणा नर देही। देत ईश बिन हेत सनेही॥
नर तन भव वारिधि कहँ बेरे। सन्मुख मरुत अनुग्रह मेरे॥
कर्णधार सद्गुरु दृढ़ नावा। दुर्लभ साज सुलभ करि पावा॥
निर्मल मन जन, सो मोहिं पावा। मोहि कपट छल छिद्र न भावा॥
दो०—निन्दा अस्तुति उभय सम, ममता ममपद कंज।
ते सज्जन मम प्राण प्रिय, गुण मन्दिर सुख पुंज॥
दो०—जो न तरहिं भवसागरहि नर समाज अस पाय।
सो कृतनिन्दक मन्द मति आतमहनि गति जाय॥

॥ श्रीमद्रामायणमें नीतिका वर्णन ॥

जो परलोक यहां सुख चहहू। सुनि मम वचन हृदय दृढ़गहहू॥
मातु पिता गुरु प्रभु की बानी। बिनहिं विचार करिय शुभजानी॥
पुत्रवती युवती जग सोई। रघुबर भक्त जासु सुत होई॥
नतरुवांझ भलि बादि बियानी। राम विमुख सुत ते हित हानी॥
साधु समाज न जाकर लेखा। राम भक्त महँ जासु न रेखा॥
जाय जियत जग सो महि भारू। जननी योवन बिटप कुठारू॥
सब जग ताहि अनल ते ताता। जो रघुवीर बिमुख सुनि भ्राता॥
जो अपराध भक्त कर करई। रामरोष पावक सो जरई॥
कर्म प्रधान विश्व करि राखा। जो जस करै सो तस फल चाखा॥
शुभ अरु अशुभ कर्म अनुहारी। ईश देय फल हृदय बिचारी॥
करै जो कर्म पाव फल सोई। निगम नीतिअस कह सबकोई॥
का वर्षा जब कृषी सुखाने। समय चूकि पुनि का पछिताने॥
लोभी लोलुप कीरति चहई। अकलंकता कि कामी लहई॥
सेवक सुख चह मान भिखारी। व्यसनी धन शुभगति व्यभिचारी॥
संग ते यती कुमन्त्रते राजा। मान ते ज्ञान पान ते लाजा॥
राज नीति बिन धन बिन धर्मा। हरिहि समर्पे बिन सतकर्मा॥
बिद्या बिन विवेक उपजाये। श्रमफल पाठ किये अरु पाये॥
बादि बसन बिन भूषण भारू। वादि विरति बिन ब्रह्म बिचारू॥
सरुज शरीर बादि सब भोगा। बिन हरिभक्ति बादि जप योग॥
जाय जीव बिन देह सुहाई। बादि मोरि सब बिन रघुराई॥
रामभक्ति तजि चह कल्याना। सो नर अधम शृगाल समाना॥
सोह न राम प्रेम बिन ज्ञाना। कर्णधार बिन जिमि जलयाना॥
को न कुसंगति पाय नशाई। रहे न नीच मते चतुराई॥

परहित वस जिनके मन माँहीं। तिनकहँ जग दुर्लभ कछु नाहीं॥
सुनहु उमा ते लोग अभागी। हरि तजि होहिं विषय अनुरागी॥
सिमिटि २ जल भरहिं तलावा। जिमि सद्गुण सज्जन पहँ आवा।
कृषी नरावहिं चतुर किसाना। जिमि बुध तजहिं मोहमद माना॥
ऊसर वर्षै तृण नहिं जामा। संत हृदय जस उपज न कामा॥
सुखी मीन जहँ नीर अगाधा। जिमि हरि शरण न एकहु बाधा॥
जिमि सरिता सागर महँ जाहीं। यद्यपि ताहि कामना नाहीं॥
तिमि सुख सम्पत्ति बिनहिं बुलाये। धर्म शील पहँ जाहिं सुभाये
नाथ विषय सम मद कछुनाहीं। मुनि मन मोह करहिं क्षणमाहीं
अतिशय प्रवल देव तब माया। छूटे तबहिं करहु जब दाया॥
लोभ फाँस जेहि गल न बंधाया। सो नर तुम समान रघुराया।
तजि माया सेइय परलोका। मिटै सकल भव संभव शोका॥
सोइ गुणज्ञ सोई बड़भागी। जो रघुवीर चरण अनुरागी॥
जन्म मरण दुख सुख सब भोगा। हानि लाभ प्रिय मिलन वियोगा
काल कर्म वस होंय गोसाईं। बरवस राति दिवस की नाईं॥
सुख हर्षहिं जड़ दुख बिलखाहीं। दोउ सम धीर धरहिंमनमाहीं॥
जो रघुवीर चरण चितलावे। तेहि सम धन्य न आन कहावे॥
जहां सुमति तहं सम्पति नाना। जहां कुमति तहं विपति निदाना
बरु भल बास नरक कर ताता। दुष्ट संग जनि देय विधाता॥
कादर मन कर एक अधारा। दैब दैव आलसी पुकारा॥
शठसन विनय कुटिल सन प्रीती। सहज कृपण सन सुन्दर नीती
ममतारत सन ज्ञान कहानी। अति लोभी सन विरति बखानी॥
क्रोधिहि सम कामिहिं हरिकथा। ऊसर बीज बये फल यथा॥
शिव द्रोही मम दास कहावे। सो नर सपनेहुं मोहिं न भावै॥

शङ्कर विमुखभक्ति चह मोरी। सो नारकी मूढ़ मतिधारी॥

सो०—गुरु विन होय कि ज्ञान, ज्ञान कि होय विराग विन।
गावहिं वेद पुराण, सुख कि लहिय हरिभक्ति विन॥

विन संतोष न काम नशाहीं। काम अछत सुख सपनेहुं नाहीं
राम भजन बिन मिटहिं कि कामा। थल विहीन तरु कवहुंकि जामा
विन विज्ञान कि समता आवैं। कोउ अवकाश कि नभविन पावें
श्रद्धा विना धर्म नहिं होई। विन महि गंध कि पावै कोई॥
विन तप तेज कि कर विस्तारा। जल विन रस कि होय संसारा
शील कि मिल विन वुध सिवकाई। जिमि विन तेज न रूप गोसाईं
निज सुख बिन मन होइ कि थीरा। परश कि होय विहीन समीरा
कवनेहुं सिद्धि कि विन विश्वासा। विन हरिभजन न भवभयनाशा

दो०—विन विश्वास भक्ति नहिं, तेहि विन द्रवहिं न राम।
श्रीरामकृपा विन सपनेहुँ, मन न लहै विश्राम॥

गुरु विन भव निधि तरे न कोई। जो बिरञ्चि शंकर सम होई॥
जपतप मख शम दम व्रत दाना। विरति विवेक योग विज्ञाना॥
सव कर फल रघुपति पदप्रेमा। तेहि विन कोउ न पावे क्षेमा॥
सोइ पावन सोइ सुभग शरीरा। जो तन पाय भजहि रघुवीरा॥
राम विमुख लहि विधि सम देही। कवि कोविद न प्रशंसहिं तेही
देखेहुँ सव करि कर्म गोसाईं। सुखी न भयेउँ अबहिं की नाईं
गुरु शिष अंध वधिर कर लेखा। एक न सुनें एक नहिं देखा॥
हरै शिष्य धन शोक न हरई। सो गुरु घोर नरक महँ परई॥
सुनिखगपति अस समझि प्रसंगा। वुध नहिं करहि अधम कर संगा
जो शठ गुरु सन ईर्षा करहीं। रौरव नर्क कल्प शत परहीं॥
राखै गुरु जो कोप विधाता। गुरुविरोध नहिं कोउ जग त्राता॥

कामी पुनि कि रहै अकलंका। पर द्रोही की होय निशंका॥
वंश कि रह द्विज अनहित कीन्हें। कर्म कि होहिं स्वरूपहिंचीन्हें
काहू सुमति कि खल सँग जामी। शुभ गति पाव कि परत्रियगामी
राज कि रहै नीति विन जाने। अघ कि रहे हरिचरित वखाने॥
भव कि परहिं परमातम विन्दक। सुखीकि होय कबहुँ परनिंदक
पावन यश कि पुन्य विन होई। विन अघ अयश कि पावै कोई॥
लाभ कि कछु हरिभक्ति समाना। जेहि गावहिं श्रुति संत पुराना
हानि कि जग यहि सम कछु भाई। भजिय न रामहिं नर तन पाई
अघ कि विना तामस कछु आना, धर्म कि दया सरिस हरियाना
जहँ लगि साधन वेद वखानी। सवकर फल हरिभक्ति भवानी॥
रामचरण पंकज प्रिय जिनहीं। विषय भोग वश करहिं कि तिनहीं
तव लगि हृदय वसत खल नाना। लोभ मोह मत्सर मद माना॥
जव लगि उर न वसत रघुनाथा। धरे चाप शायक कटि भाथा॥
सुधासमुद्र समीप विहाई। मृग जल निरखि मरहु कत धाई॥
अव सोइ यतन करहु तुम ताता। देखउँ नयन श्याम मृदुगाता॥
तृषित निरखि रविकर भव वारी। फिरहिं मृगा जिमि जीव दुखारी
जहँ तहँ रहे पथिक थकि नाना। जिमि इन्द्रीगण उपजे ज्ञाना॥
रस रस सोषि सरित सर पानी। ममतात्याग करहिं जिमि ज्ञानी॥
शरदातप निशि शशि अपहरई। संत दरश जिमि पातक टरई॥
उदासीन वरु रहिय गोसाईं। खल परिहरिय स्वान की नाईं॥
दो० काम क्रोध, मद, लोभ, सव, नाथ नरक कर पन्थ।
सव परिहरि रघुवीर पद, भजहु कहहिं सदग्रन्थ॥
सचिव वैद्य गुरु तीन जो, प्रिय बोलहिं भय आश।
राज, धर्म, तन, तीन कर, होय वेगही नाश॥

भूमि जीव संकुल रहे, गये शरदऋतु पाय।
सतगुरु मिले ते जाहि जिमि, संशय भ्रम समुदाय॥

॥ सत्संगका महत्व ॥

दो० सुनि समझहिं जन मुदित मन, मज्जहिं अति अनुराग।
लहहिं चारि फल अक्षत तन, साधु समाज प्रयाग॥

मज्जन फल देखिय तत्काला। काक होंहिं पिक बकहु मराला।
सुनि आश्चर्य करै जनि कोई। सत्संगति महिमा नहिं गोई॥
बाल्मीक नारद घटयोनी। निज २ मुखन कही निज होनी।
जलचर थलचर नभचर नाना। जे जड़ चेतन जीव जहाना॥
मति कीरति गति भूति भलाई। जब जेहि यतन जहाँ जेहि पाई।
सो जानहिं सत्संग प्रभाऊ। लोकहु वेद न आन उपाऊ॥
बिन सत्संग विवेक न होई। राम कृपा बिन सुलभ न सोई।
सत्संगति मुद मंगल मूला। सोई फलसिधि सबसाधन फूला॥
शठ सुधरहिं सतसंगति पाई। पारस परशि कुधातु सुहाई।
विधिवश सुजनकुसंगति परहीं। फणिमणिसम निजगुण अनुसरहीं
विधि हरि हर कवि कोविद बानी। कहत साधु महिमा सकुचानी
सो मोसन कहि जात न कैसे। शाकवणिक मणि गुणगण जैसे।

दो०—वन्दौं संत समान चित, हित अनहित नहिं कोय।
अञ्जलि गत शुभ सुमन जिमि सम सुगंधकर दोय॥
संत सरल चित जगत हित, जानि सुभाव सनेहु।
बाल बिनय सुनि करि कृपा, रामचरण रति देहु॥

भक्ति स्वतन्त्र सकल सुख खानी, बिन सत्संग न पावहिं प्राणी।
पुन्य पुञ्ज बिन मिलहिं न संता। सत संगति संसृति कर अंता
सब कर फल हरिभक्ति सुहाई। सो बिन सन्त न काहू पाई।

सत संगति दुर्लभ संसारा। निमिष दण्डभरि एकहु वारा॥
बड़े भाग्य पाइय सतसंगा। विनहिं प्रयास होय भव भंगा॥
अब मोहि भा भरोस हनुमन्ता। बिनहरि कृपा मिलहिं नहिं संता
संत विशुद्ध मिलहिं पुनि तेही। राम कृपाकरि चितवहिं जेही॥
जब बहु काल करिय सतसंगा। तब होइय यह संशय भंगा॥
मोरे मन प्रभु अस विश्वासा। राम ते अधिक राम कर दासा॥
राम सिन्धु घन सज्जन धीरा। चन्दनतरुहरि सन्तसमीरा॥
अस विचारि जो करि सतसंगा, राम भक्ति तेहि सुलभ विहंगा॥

दो०—गिरिजा सन्त समागम, सम न लाभ कछु आन।
बिन हरि कृपा न होय सो, गावहिं वेद पुरान॥
सन्तपन्थ अपवर्ग कर कामी भव कर पंथ।
कहहिं संत कवि कोविद, श्रुति पुराण सद्ग्रन्थ॥

धन्य घरी सोइ जब सतसङ्गा। धन्य जन्म द्विज भक्ति अभंगा॥
राम कथा के ते अधिकारी। जिनके सतसंगति अति प्यारी॥
सदा सुनहिं सादर नर नारी। ते सुरवर मानस अधिकारी॥
जो नहाइ चहु यहि सर भाई। तो सतसंग करहु मन लाई॥
काम क्रोध मद मोह नशावन। विमल विवेक विराग बढ़ावन॥
सादर मज्जन पान किये ते। मिटहिं पाप परिताप हिये ते॥
जिन यहि वारि न मानस धोये। ते कायर कलिकाल विगोये॥
राम चरित जे सुनत अघाहीं। रस विशेष जाना तिन नाहीं॥
राम कथा सुन्दर करतारी। संशय विहँग उड़ावन हारी॥

दो०—विन सत संग न हरि कथा, तेहि बिन मोह न भाग।
मोह गये बिन रामपद, होइ न दृढ़ अनुराग॥
सात स्वर्ग अपवर्ग सुख, धरिय तुला एक अङ्ग।

तुलहि न ताहि सकल मिलि, जो सुख लव सतसंग ॥

१—लेनेसे जिस रामनामके, पापपुञ्ज होते जर छार।
जन्म मृत्युसे रहित जीव हो जाता है भवसागर पार ॥
जिनका उलटा नाम सदाजप व्याधा हुआ महामुनि भक्त।
जिनके मधुर रूपका चिन्तन करते सदा शैलजाशक्त ॥
सर्व शिरोमणि उसी नामका अमृत रूपी प्याला।
रे मन व्यर्थ भटकता है क्यों पीकर बन मतवाला ॥

२-न वचै कोउ पण्डित वेद पढ़े न वचैं कोउ ऊँचे चिनाए अटा।
न वचै कोउ जङ्गल वास किये न वचै कोउ शीश बढ़ाए जटा ॥
दिनचारि छलावन यों तुलसी नर नाहकको सब ठाठ ठटा।
भला जो चहौ सियाराम रटो नहिं आय अचानक काल डटा ॥

३—लिखन पढ़न जाने तुरँग चढ़न जाने जलमें तरन जाने चातुरी बखानी है जाने नाड़ी वैद्यक रसायन छू मन्त्र जाने यन्त्र तन्त्र योग जाने युवती लुभानी है ॥ चोरी जाने जुआ जाने ज्योतिष विचार जाने नाच-गान तान जाने तोताकी कहानी हैं। जाने नहिं ब्रह्मज्ञान "हरिहर" न जाने भक्ति राम नहिं जाने तो वृथा जिन्दगानी है ॥

४—एक विश्वा हारे जो न मानें गुरु लोगनको तीन विश्वा हारे खाँय खर्चें न दाम को। पाँच विश्वा हारे चोरी चुगली लवारी करैं दश विश्वा हारे गये तीरथ न धामको। "हरिहर" न सेये सन्त बारह विश्वा हारे सोई, सोरह विश्वा हारे जो न तजे कोह कामको। उन्नीस विश्वा हारे जौंन कन्या वेचि धन खाये बीस विश्वाहारे जो बिसारे श्रीराम नामको ॥

५—कामसे रूप प्रताप दिनेशसे सोमसे शील गणेशसे माने।

हरिश्चन्द्रसे सांचे वड़े विधिसे मघवासे महीप विषय रस साने॥
शुकसे मुनि शारदसे वक्ता चिरजीवन लोमशते अधिकाने।
ऐसे भये तो कहा तुलसी जो पै राजीवलोचन राम न जाने॥
६—बुद्धि वड़ी चतुराई वड़ी सुख सुन्दरता तनसों लपटी है।
धर्म वड़ो घर दाम वड़ो करतूति वड़ी जगमें पलटी है॥
राज सभा सन्मान वड़ो अरु इन्द्रहुसे कछु नाहिं घटी है।
तुलसी एक राम सनेह विना मानो सुन्दर नारिकी नाक कटी है॥
७—वेद पुराण पढ़ो सवरो विगरो सब पेट उपायन में।
भोर भये चहुँ ओर फिरों वहु वातन की चतुराइन में॥
नित होत खुशामद पाजिनकी परि गये परलोक नशाइन में।
तुलसी विश्राम न काहू लह्यो आराम है रामके पाँयन में॥
८—वेद पढ़े औ पुरान पढ़े पढ़िके षट द्वादश शास्त्र मझारे॥
ज्ञानी भये पै गुमानी भये जिन ज्ञानके आगे न आन विचारे॥
आय समागम भो जवहीं छः चारि अठारह सवही उचारे॥
सवहीकी थाह लही "हरिहर" विन रामकी थाह गये यम द्वारे॥
९—राज सुरेश पचासकको विधिके करसे जो पट्टा लिखि पाये।
सम्पति सिद्धि सवै तुलसी मनकी मनसा चितवै चितलाये॥
पूत सपूत सुनीति प्रिया निज सुन्दरता रतिको मदनाये।
ऐसे भये तो कहा तुलसी जग राम विना नर जीवत जाये।
१०—झूमत द्वार अनेक मतंग जंजीर जड़े मद अम्बु चुचाते।
तीखे तुरंग मनोगत चञ्चल पवनके गवनहुँसे वढ़िजाते॥
भीतर चन्द्रमुखी अवलोकत वाहिर भूप खड़े न समाते।
ऐसे भये तो कहा तुलसी जो पै जानकी नाथके रंग न राते॥
११—भलि भारत भूमि भले कुल जन्म समाज शरीर भलो लहिके।

ईर्षा पुरुषा तजिके वर्षा हिम आतप घाम सदा सहिके॥
तुलसी जो भजे भगवान सयान सोई हट चातक ज्यों गहिके॥
नतु और सवै विष वीज वये हर हाटक काम धुका नहिंके॥
१२—जपयोग विराग महामख साधन दान दया दम कोटि करै।
निगमागम वेद पुरान पढ़ैं तपसानलसे युग पुञ्ज भरै॥
विधि सिद्धि सुरेश महेश गणेश से सेवत जन्म अनेक मरैं।
मन सो प्रण रोपि कहैं तुलसी रघुनाथ विना दुख कोउ न हरै॥
१३— रे मन मूढ़ वृथा भटके नौ मास कहो सुधि कौने लई है।
जन्म भयोतेहि पाछेहिके उन पहिले कियो तन क्षीरमई है॥
सो करुणानिधि भूल्यौ नहीं अव नाहक तोहि यह ऊब भई हैं।
नरसों कवहूँ जनि याचे कछू सब दैहैं वही जिन देह दई हैं।
१४—तजि सोच हिये हरि नाम जपौ जो अहै सुख दायक दुक्ख प्रहारी। जेहि ध्यावत शेष महेश गणेश ऋषि सनकादि उमा त्रिपुरारी॥ सुत मातु पिता तिय बंधु सखा धन धाम सवैं रविको भव भारी। ता विच धावत है मृग ज्यों न जपै जग पालक कृष्णमुरारी।
१५—भूलौ न वावरे हंस यहाँ मुकता ममतान के रंग रँगा हैं।
फैलि रह्यो जगजालमहा शिवराम न कोऊ संग सगा है॥
चाप चढ़ाय चहूँ दिशि हेरत अन्तहुको पुनि संग लगा है।
सियपतिके पद पङ्कज ओटह्वै यार रहो हुशियार दगा है॥
१६—घोड़ा पील पालकी खवास खिदमतगार सवै सैनाके समूह जे जितैया बड़ी रारिके। जेवर जवाहिर जोशखाने तोशखाने खाने सवै छोड़ि चले जैसे वकुचा बेगारि के॥ वैनी कवि कहै परमारथ न कीन्हौं मूढ़ कीने घनेपाप हेतु सुता सुत नारिके।

काल शर साधे देखि मायामोह आंधे कछू गाँठिहून बाँधे जब काँधे चले चारिके।

१७—रह्यो नहिं कोई अरु रहै नहिं कोई यह जाने सब कोई पै न माने मोह परिगये। हाथी अरु घोड़े छोड़े सब ठौर २ घरनमें गाढे दाम भूरि भाँड़न सौं विसरि गये॥ कहैं छविराम सियाराम के भजन विन ऐसेही विचारो जन्म कोटिहू निकरि गये। जोर वाले जंग वाले जालिम जुल्म वाले जाहिर जवाहिरी सब चिताकी आगि जलि गये॥

१८—राम विहाय मरा जपते विगरी सुधरी कवि कोकिल हूकी नामहिते गजकी गणिका औ अजामिलकी चलि गई चल चूकी॥ नाम प्रताप बड़े कुसमाज बचायरही पति पांडु वधूकी। ताको भलो अजहूँ तुलसी जेहि प्रीति प्रतीत है आखर दूकी॥

१९—मारा मारा कहेसे मुनीश पार ब्रह्म भयौ रामारामा कहेसे न जानी कौन पद है। काशीमें मरत उपदेश जो महेश देत भूलि जात जीव ताको माया मोह मद है॥ यवन हराम कहि रामहींको धाम पायो प्रकट प्रभाव ऐसो पोथिनमें गद है। कहैं रघुनाथदास एते पै न भजै राम और कहा कहौं जगत तासौं पुनि हद है॥

२०—प्रभु चाहत हैं निष्केवल प्रेम न चाहत रूप कुलहि बल है। रसरंगमणी चलि भीलिनिको निज मातु समान मिले कल है॥ रघुनन्दन भावके भूखे भरे फल खाय अघाय पिये जल हैं। शिवरीके सुप्रेम भरे भल ये फल हैं कि चहूँ फलके फल हैं।

२१—प्रेम लग्यो परमेश्वरसे तब भूलि गयो सवरो घर द्वारौ। ज्यों उन्मत्त फिरै जितही तित नेंक रहै न शरीर सँभारौ॥ श्वाँसहु श्वाँस उठै प्रति रोंम बहै द्वग नीर अखण्डित धारौ।

सुन्दर कौन करै नवधा जब छाकि रह्यो रस पी मतवारौ॥

२२—आरतपाल कृपालु जो राम जहाँ सुमिरे जहिको तहँ ठाढ़े। नाम प्रताप महा महिमा अकरेहु किये खोटेहु छोटेहु वाढ़े॥ सेवक एकते एक अनेक भये तुलसी तिहुँ ताप न दाढ़े। प्रेम वदो प्रहलादहिको जिन पाहनसों परमेश्वर काढ़े॥

२३-सियाराम स्वरूप अगाध अनूप विलोचन मीननको जल है। श्रुति राम कथा मुख रामको नाम हिये पुनि रामहिको थल है॥ गति रामहिं सों रति रामहिं सों मति रामहिं सों रामहिंको वल है। सवकी न कहै तुलसीके मतै इतनो जगजीवनको फल है॥

२४—काहूके आधार जपयोग पूजा पाठ नेम काहूके अधार होत संध्या प्रात शामकी। काहूके अधार देश देशनके पुन्य क्षेत्र काहू के अधार वेद भाषें चारौ धामकी॥ काहूके अधार काम मोह देह गेह काहूके अधार निज मित्र सुत व्रामकी॥ मोहितो भरोसो एक कौशिलेश सीताराम प्रीति औ प्रतीति है गणेश राम नामकी।

२५—छोरा भये छातीसे लगाय राखी मातु गोद छोहरा छवीले खेल खेले नये-नये हैं। राजा भये राउ भये कोई उमराव भये ज्वान भये युवती सनेह सरसये हैं॥ वैनी कवि कहैं हरिभक्त ना भये पण्डित प्रवीण तेहू मोह मद मये हैं। काका भये दादा भये कछु दिन मरि प्रेत भये भये अनभये मानो भवै नाहिं भये हैं।

२६—हड्डी और चामका वना हुआ पूतला हैं नामका न प्रेम है तो आदमी है नामका। भटकःसा शामका पखेरू जैसे उड़ता है इमिलीका न आमका न छाँहका न घामका। वाम अरु दामका गुलाम वना रहता है अस्वादत्त प्रेम कभी किया नहीं रामका।

उल्लू है तमामका किसीके न कामका रामका न दास तो फिर जीना है हराम का ॥

२७—जीवत मृतक ताते समझि नहिं परत पीर अन्तक सदन जाय अन्त शिर पीट है। कहैं हम पण्डित प्रवीण सभा जीते वहु रटै नहिं नाम पढ़े पाथर औ ईंट हैं॥ दान अभिमान सो तौ अतिही निदानपन नृगके समान नृप दानी गिरगीट है। श्रीयुगलअनन्य शंक सकल विहाय जो रटै नहिं नाम सो विशेष चींट कीट हैं॥

२८—मांगत हों विधि से कर जोरि कृपा करिके वर दीजिये पाँचो। नाम औ रूप लीला अरु धाम जियों जब लौं तुलसीकृत बाँचों॥ छाँड़ि सबै शुभकर्म कुकर्म और साधनकी कछु रेख न खांचों। दानी उदार गणेश विलोकि दियो सबको चतुराननं याचों॥

२९—दूतन वुलाय यमराज भरिरोष कहै गये गफिलाय तुम पातकी न लावते। कीजै कहा नाथ वहाँ श्रीयुगलअनन्य सवे जीवन शरण पुन्य मारग चलावते। रामनाम रूप धाम लीलागुन आठो याम खलक तमाम यहि काममें लगावते। खोरिखोरि ग्राम ग्राम धाम धाम राम राम एकहु कलाम विन राम नहिं पावते

३०—दुक्ख नहिं आवै छलछिद्र न सतावै अघलेशहू न पावै मीचु आयके हटा करै। निष्फल शिव शूलै इन्द्र बज्रहू न हूलै विष्णु चक्र देखि भूलै लखि शत्रु वल घटा करे॥ यमगण मुख मोड़े वहु नृपति निहोरे सब देश करजोरे सुख सम्पदा पटा करै। गणेश जो चाहै सियारामजी निवाहै मन करिके उत्साहैं श्रीराम नाम जो रटा करै॥

३१—जो नर निरन्तर राम रूपी पाठ रामायण करै।

अरु प्रेमसे श्रद्धा सहित नित श्रवण जो इसका करै ॥
निश्चय तरै भव सिन्धुसे अघ पुञ्ज नश जावें सभी ।
हो लीन्ह जावे ईशमें पुनरागमनसे रहित भी ॥

३२—पोथी पाठ समाप्त करिके धरे शिव ढिग रातमें ।
मूरख पण्डित सिद्ध तापस जुटे सब, जब पट खुले प्रभातमें ॥
देखे तृषित दृष्टि ते सब जने कीन्हीं सही शङ्करम् ।
दिव्याक्षर सों लिखौ पढ़े धुनि सुने सत्यं शिवं सुन्दरम् ॥

३३—यह दानि चतुष्फलकी सुख खानि अनूपम आनि हिये हुलसी । अरु सन्तनके मन रञ्जनको अति मंजुल माल लसी तुलसी । अरु मानुषके तरिबे कहँ तोषवनी भवसागरके पुलसी । सब कामन दायक काम दुहा सम राम कथा बरनी तुलसी ॥

३४—देव वाणी वैभवको मिले जो सहारो कछु शूरके प्रकाशको तुरत अपनाऊँ मैं । नेहरँगमगे लैके विनयकी पाती करि नैननके सोहें राखि सुख सरसाऊँ मैं ॥ मंजुल बिमल राम चरित्रके मानसमें उमँगि-उमँगि चिरकाललों नहाऊँ मैं । तन्मयह्वै आचरण करों उनहींके दासतुलसीके गुण तब कहि पाऊँ मैं ॥

३५—विश्वकी निकाई जग सुलभ बनाई जेहि विश्वकी निकाई लागे जाहीसों नीकी हैं । ज्यों ज्यों पान कीजै त्यों-त्यों बाढ़ति अतृप्ति रहै ऐसी रसवारी यह गागरी अमी की है ॥ एक बार चाखी तेह्व भये मधुमाखी सबै और कविताई तिन्हें लगे अति फोकी हैं । ऐती रुचिराई और काव्यमें न पाई बहु गुण अधिकाई कविताई तुलसी की है ॥

३६—वेदको विधान लिये पूरन पुरान मत मानत प्रमाण साधु सन्त सब ठाईके । प्रेम रस भीने पद परम नवीने कहि दीने हैं

अखेद कवि भेद जहँ ताईंके ॥ दया दरसावै सरसावै प्रेम पूरो जल हियौ हुलसावै जौन पाहनकी नाईंके। स्वामीको चरित्र और वापुरो वखाने कोन वृत्तिपरी वांट यह तुलसी गुसाईंके।

३७—सरिजात सञ्चित असञ्चित बिसरिजात। कटिजात भोग भव-बन्धन कतरि जात। तरिजात कामसरि जरिजात कोप करि कर्म कलिकाल तीनि कण्टक भभंरिजात॥ जरि जात दम्भ दोष दूषन दररिजात दुरिजात दारिद दुकालहूँ निसरि जात॥ भरिजात भाग्यभाल किंकर गोविन्द त्योंही ज्योंही तुलसीकी कविताई पै नजर जात॥

३८—पापी व्यभिचारी भारी कपटी कुचाली मूढ़ औगुणकी खानि पढ़ि साँची गति धारे हैं। चुगल चवाई चोर चपल चलाक चित चाव चौगुने सों राम नामहिं उचारे हैं। जेते गये चले चढ़ि मानस सोपान पर धोय मल मानसको बुद्धिहिं सुधारे हैं। धन्य तेरी कृति प्रेम तुलसी गोस्वामी इत तेते जीव तारे जेते नभमें न तारे हैं।

३९ यमकी अनीकी मुख लावनी मसीकी मानो कन्या भानुजीकी मोद मथुरापुरीकी है। कीरति हरीकी मन-मानसते कढ़ी की रस रंग तार नीकी धार सरयूसरीकी है। काटनी कसीकी विषय आश फाँसरीकी मुख म्यानमें धसीकी चोखो पुत्रिका असीकी है। शारद शशीकी सम हरै ताप जाको प्रेम भक्ति सिय पियकी दानी वानी तुलसीकी है

४०—वनि रामरसायनकी रसिका रसना रसिकों की हुई सफला। अवगाहन मानसमें करिके जन मानसका मल सारा टला॥ बनी पावन भावकी भूमि भली हुआ भाविक भावुकताका

भला। कविता करिके तुलसी न लसे कविता लसी पा तुलसीकी कला ॥

४१—वैदिक प्रमाण जाको वेदको बदत त्यों पौराणिक प्रमाणमें प्रमाण जासु गावें हैं। देश देश वासी निज २ अक्षरन माँहि लियो है उतार वृद्ध बालक पढ़ावें हैं ॥ कहाँ लगि कहों जासों यमहूँ डराय जात ऐसो को न जाको चौपाई चारि आवें हैं। तुलसी रचति राम चरित्रको रघुराज सोचत बदत राम रूप उर आवे हैं ॥

४२—वेद मत शोधि २ शोधिके पुराण सबै संत औ असंतनके भेदको बताबतो। कपटी कुराही क्रूर कलिके कुचाली लोग कौन रामनामहूँ की चरचा चलावतो। बैनी कवि कहै मानो मानो हो प्रतीति यह पाहन हिये में कौन प्रेम उपजावतो। भारी भवसागर उतारतो कवन पार जो पै श्रीरामायण तुलसी न गावतो ॥

४३—अँग्रेजो फारसी फ्रांस जर्मनीहूमें सियाराम नामकी कहानी दरशात है। सब पाठशालनमें शालनके बालनमें पोथीके अटालन में रामहीं दिखात हैं ॥ राज दरबारनमें दुकान अलमारिनमें बागकी बहारनमें होत सोई बात है। मूरख चपाटहू सों रामको लिवायो नाम तुलसी चरण ही की यह करामात है ॥

४४—हालके द्विवेदी चतुर्वेदी शुक्ल मिश्रबन्धु गुप्तदीन राम हित सनेही रत्नाकरजू। रंग औ अनंग रसरंगमणि पाठकजू नवलविहारी शर्माजू नवनागरजू ॥ इन्दु श्रीबिन्दु अरबिन्दु नेहलता श्रीगाँधीजी गद्य पद्य लेखक मलिन्द शक्तिचामरजू। निज निज भावसों गुसाँईं गुण गान किये छिपे नहीं छपेपत्रिकान बीच सादर जू ॥

४५—आता जो न तू तो भवभीतिको भगाता कौन। भूले पथिकों को ज्ञान दीपक दिखाता कौन। मैंटिके विरोध शैव वैष्णवोंके एक रामभक्तिका सुपंथ दिखलाता कौन॥ भूले स्वधर्म कर्म रीति और नीति सभी प्रीति आर्य सभ्यताकी हममें जगाता कौन॥ देखि क्षयग्रसित जाति वनके सुखैन कहो श्रीरामायण रूपमें संजीवनी पिलाता कौन॥

४६—विश्व सकल की पूज्य प्रद प्रभाप्रकाशिनि। भक्ति भाव भरि भव्य विज्ञता विमल विकासिनि॥ मंजुल मृदुल मनोज्ञ निखिल नित नीति सुहावनि। देती सुखप्रद सतत सबहिं रामायण पावनि। भुवि विदित सकल कल्याणमय नित कलि कलुष नशावनी। हैं मुद मंगलमय सदा श्रीरामचरित्र विस्तारिणी।

४७—मथि पुरान श्रुति वेद निर्मयी स्वर्ग नसैनी। भक्ति प्रेम साहित्य मई बन गई त्रिवेनी। यह जल जो जन न्हात सुखद सद गति सो पावत। तुलसीके उपकार मानि गुण गरिमा गावत। नित इसके आश्रय से उन्हें मिलती कीर्ति अगस्य हैं। शंकर व्यापी विश्वमें श्रीतुलसी स्मृति रम्य है।

४८—हेराम-चरित्र-सरोज मधुकर! हे अमर कवि केशरी!
महिमा तुम्हारी कविकलाधर! भुवन भरमें है भरी॥
हैं जान्हवी जल सम पवित्र कवीन्द्र! तेरी कल्पना।
है भव्य-भावोंसे भरी कविवर तुम्हारी, भावना॥

४९—मुनिवर? हुआ था जन्म तब साहित्यके उस कालमें।
भारत फँसा था जिस समय हा? पाप माया जालमें॥
था शैव-वैष्णवोंका मचा जब द्वन्द भारत-देशमें।
सब धर्म पथको भूल बैठे थे? अधर्मावेशमें॥

५०—भगवानने भेजा तुम्हें उद्धार करने के लिये॥
कलि-कुटिल-मानव वृन्दका निस्तार करने के लिये॥
निज अतुल नव अनुराग-रन्जित काव्यमय उपदेशसे।
तुमने किया जग राम-मय सबको छुड़ाया क्लेशसे॥

५१—कल कीर्ति अजरामर बनी है अवनि तल पै सर्वदा।
कवि-कुल-तिलक-तुलसी ? तुम्हारी कृति हुई है शान्तिदा॥
शुचि भक्ति भावोंसे भरी, उत्फुल्लिता हैं उर कली।
तव काव्य कानन पुष्प ले प्रभु दे रही पुष्पाञ्जली॥

५२—बैठिये न जहाँ तहाँसंगति कुसंगतिमें कायरके संग शूर भागै पै भागे हैं। फूलकी सुवास जैसे वासनामें मोय रही काम क्रोध लोभ मोह पागे पै पागे हैं॥ अरे अरे घर बसे सन्यासीके घर-कैसौ कामिनीके संग काम जागै पै जागै है। काजलकी कोठरीमें कैसोहू सयान जाय काजलकी एक लीक लागै पै लागै है॥

५३—को बड़ है जगमें धरणी धरणी रज ज्यों शिर शेष लसन्त है। सोई अनन्त मणीरसरंग अनंगअरी-उरहार लसन्त हैं। शंभु सशैल उठायो दशानन रावणै बाली दवायो दुरन्त है। श्रीराघव वालि विदारे तिन्हें उरधारे तेहो सबसे बड़े सन्त हैं।

५४—बाजी दिन बाजी हाथ बोजत नगाड़े साथ बाजी दिन करकुदार खेत गोड़ि रहिये। बाजी दिन शाल औ दुशालनके ढेर लाग बाजी दिन टका टूक कामरि ओढ़ि रहिये॥ बाजी दिन हाजिर हजारन हुकम होत बाजी दिन पाजीकी हजार बात सहिये। हारियें न हिम्मत बिसारिये न सीताराम जाही बिधि राखे राम ताही विधि रहिये॥

५४—आय गयो काल मोह जालमें लपटि रह्यो महा विक-राल यमदूत सो दिखाइये। वोही सुत नाम दियो जो सन्त लियो सो पुकारि स्वरआरत सुनाइये॥ सुनत ही पारषद आये वाही ठौर दौरि तौरि डारौ फाँस कह्यो धर्म समझाइये। हारे लै बिदारे जाइ पति पै पुकारे कही सुनो वज्र मारे मति जावो हरि गाइये॥

५५—झूठौ है झूठौ है झूठौमहा कवि संत अनन्त न अन्त लहा है। ताको सहै शठ कोटिक संकट काढ़त दन्त करन्त हहा है॥ ज्ञानपनेको गुमान बड़ो तुलसीके विचार गमार महा है। श्रीजानकी जीवनराम न जाने औ जान कहावत जान कहा है॥

५६—श्रीराम, कहु रमैया कहु, कृष्ण कहु, कन्हैया कहु, मुरली मनोहरके चारु चरण गहुरे। चूड़ामणि चिन्तामणि केशव वन-माली कहु, श्रीवृन्दवनविहारो कहु, कुञ्जनमें सदा संग रहुरे। अमृतबचन बोल सन्तनके सँग डोल काम क्रोध मद लोभ इनको जनि गहुरे। भक्त गजाधर कहें पुकारि पुकारि श्रीसीताराम सीताराम मूढ़मन कहुरे॥

५७—दाता औ महीप मानधाता औ दलीप ऐसे जाको यश द्वीप द्वीप आजहूलों छायौ है। बली समान बलवान को भयो जगत बीच रावण समानको प्रतापी जग जायो है॥ बाणकी कलानमें सुजान द्रोण पारथसे जाको यश दीनदयाल भारतमें गायो हैं। कैसे कैसे शूर रचे चातुर बिरंचिजूने फेरि चकचून करि धूरिमें मिलायो है॥

५८—केते भये यादव सगरसुत केते भये जातहू न जाने ज्यों तरैया प्रभातकी। बलि वेणु अम्बरीश मानधाता प्रहलाद

कहां लगि गिनावों कथा रावण ययातकी ॥ तेऊ न वचन पाये काळ कौतुकीके गाल भाँति भाँति सैना सजी जिन घने दुख घातकी। चारि चारि दिनको चवाव चाहैं कोई करै अन्त लुटि जइहैं जैसे पूतली बरातकी।

५९—एक दिन हरिश्चन्द्र जगत बीचदानी भये डोम घर दास भये जाय एकक्षणमें। एक दिन रावणने विश्वजीत वस-कीन्हों एक दिन दशौशीश काटे गये रनमें। एक दिन पारथने महाभारत जीत लीन्हों एक दिन भीलनने लूट लियो वनमें। मानुष विचारे की कहा चली "हरीहर" दिनकर की तीन गति होत एक दिनमें।

६०—रावणके सम बावन वीर रह्यो न गयो सो भयो कहनेको। शेष सुरेश महेश गणेश सबै चलि जांय तो और रहे को काल करालके आननमें सब जाहिं-ध्रुवे चाहे खाँय अमीको। चेतहु हेत करो हरिसों जो गई सो गई अब राखि रही को॥

६१—काहे गुमान करो धनको अरु रूप पोशाकनके मद माते। यमराज जबै धरिहैं वहियां मुखसे तव आवहिंगी नहिं वातें॥ मारि त्रिशूल वेहाल करें तलवारन सों करि हैं बहु घातें। दुनियाँ मनिराम विसारि दई यमराज तुम्हें छोड़िहैं केहि नाते॥

६२—जब यमराज रजायसुते मोहि लै चलि हैं भट बांधि नटैया। शाशत घोर पुकारत आरत कौन सुनै चहुँ ओर डटैया॥ तात न मातु पिता सुत स्वामी सखा अरु कोऊ कहूँ अवलम्ब दिवैया। एक कृपालु तहां तुलसी दशरत्थको नन्दन वंधि कटैया॥

६३—पङ्कजकोषमें भौंर छिपो अपने मनमें करतौ मन सूबो। हुइ है प्रभात उगें गे दियाकर लै मकरन्द चलों घर खूबो॥ वैनी सो वीचहि और भई नहिं जानत कालको ख्याल अजूबो। नलिनी गजराजने खाइ लियो रहिगौ मनको मनहीं मन सूबो॥

६४—पल काटो इन नैननके गिरधारी विना पल अन्त निहारें। बुद्धि कटै न भजै रघुनन्दन जीभ कटै हरि नाम बिसारें। मीरा कहै जरि जाय हियो पदकंज विना पल अन्तर धारें। शीश नवै तजिकै वृजराज वहि शीशहि काटि कुआँमें डारें।

६५—दूतन बुलाय यमराज भरि रोष कहैं दीन है उठाय तुम हुकम हमार है। खाली पड़े कुण्ड सब पापिनि बिहीन देखि करैं बरखास तोहि गाफिल गवाँर है॥ दूत जोरि हाथ कहै स्वामी सुजान सुनो कलि वीच रामनाम अधिक प्रचार है॥ भंनत "गणेश" भूलि भटकि विवश चाहै एकबार कहै राम भव निधि पार है॥

६६—जग याचिय काहुन याचिय तो फिर याचिय जानकी जानहिरे। जेहि याचत याचकता जरि जाय जो जारत जोर जहानहिरे। गति देखि बिचारि बिभीषणकी अरु आनि हिये हनुमानहिरे॥ तुलसी भजि शोच बिमोचनको प्रभु संकट कोटि कृपाणहिरे॥

६७—तारो प्रहलाद जिन तातको तमाशा देखो ध्रुवको तुम तारो जिन्ह बालापन गारो हैं। तारो मोरध्वज सुत शीशपर चढ़ायो आरो हरिश्चन्द्र तारो जिन सत्य नहिं टारो है। पहले उन्ह भक्ति कीन्हीं पीछे तुम मुक्ति दीन्हीं तारिवो नहीं यह

बणिज व्यौपारो हैं॥ तारो तो तारो नहिं नाम पलटि डारो बिना भक्ति तारो तो तारिबो तिहारो है।

६८—एकको छोड़िके दूजो भजे तो जरै रसना वा लब्बरकी। अबकी दुनियां गुनियां जो भई सो बांधत मोट अटब्बरकी। श्रीपति आश है रामहिंकी अरु त्रास नहीं काहू जब्बरकी। जिनको हरिकी परतीति नहीं सो करो मिलि आश अकब्बरकी।

६९—सुदामा तन हेरो तब रंक से राव कीन्हों बिदुर तन हेरो तो राज दियो चेरे ते। कुबरी तन हेरो तो सुन्दर स्वरूप दीनो द्रुपदी तन हेरो तो चीर बढ़ौ टेरे ते। कहै क्षत्रशाल प्रह-लादकी प्रतिज्ञा राखी हरिनाकुश मारोतो नेक नजर फेरेते। एरे अभिमानी मूढ़ ज्ञानी भये काह होत नामी नर होत गरुड़ गामी के टेरेते॥

७०—जन रखवारे जन पैज रखवारे करन सुखसारे अरु हरण बिपदाके हैं। भक्ति अधिकारी भानु परम सुखारो होत पाप जरि छार होत सन्मुख जाके हैं। सुयश पताके फैले जाके देश देशनमें मन क्रम बचनसों शरण जिन ताके हैं। ऋद्धि देन बारे सब सिद्धि देन वारे मोद मंगल निधान पग श्रीजनककी सुताके हैं।

७१—वेदके पढ़ैया को अढ़ैया रोय सीधो देत नकलके करैयाको रुपैया रोज रुक्कामें। वेश्याके आये सन्मान बहु भाँति करें साधुनको देखिके लुकात है बिलुक्कामें॥ जोड़के करैया जंग गढ़के फँदैया तिनहूँको तलब देत एक एक सिक्कामें। आज कल राजा राउ महाराज सबै जानत दान रह्यो पातुर और शान रही हुक्कामें॥

७२—वेद थके अरु मन्त्र थके अरु तन्त्र थके निशि बासर गाते।

शेष थके शिव इन्द्र थके अरु खोज कियो बहु भांति विधाते ॥ पीर थके औ फकीर थके और धीर थके बहु बोलि गिरातें ॥ सुन्दर मौन गही साधक सिद्ध कौन कहै उनकी मुख बातें ॥

७३—दुर्जन दुशासन दुकूल गह्यो दीनानाथ दीन ह्वै कें द्रुपद दुलारी यों पुकारी है। अपनों सबल जानि पारथसे मौन बैठे भीम महाभीम ग्रीवा नीचेकरि डारी है। अम्बरसों अम्बर पहाड़ लग्यो शेष कवि भीषम कर्ण द्रोण याही लै विचारी है॥ सारी बीच नारी है कि नारी बीच सारी है कि सारी ही की नारी है कि नारी ही की सारी हैं।

७४—द्रुपद दुलारी चहुँ ओर चितै पुनि ध्यान दियो यदुनाथ जहां हैं। भीषम द्रोण रहे करि मौन दुशासन अम्बर लीन्ह चहा है॥ पांचोपति तन हेरि रहे यदुनाथ उबारियो दुक्ख महा हैं॥ होत मैं नारी उघारी सभा बीच चारि भुजाके मुरारी कहां हैं॥

७५—सुन्दर सफेद सब्ज बैंगनी हरेरो पोरीढेरी बहुतेरी नहिं गनिबेनें आयो है। लाली औ गुलाबी गुलनारी पट फालसई काई और बादामी बहुतेरी दरशायो हैं। खाकी धानी प्याजी जाफरानी आसमानी बहु अम्बर अपार आसमान लगि छायो हैं। द्रोपदीके काज वृजराज हैं बजाज मानो लादिके जहाज पट द्वारिकासे लायो है।

७६—दीजै जन्म तो हमेश कौशिलेश देश मांहि दीजै जो निवास रघुराज राजधानीको। कीजे पशुपाहन तो पवित्र हो अयोध्या मांहि कच्छ मच्छ कीजे तो सरयूसरि पानीको॥ कीजे द्रुमलतातो "बिहारी" रस पुंजनको खग मृग कीजे तो प्रमोद सुखदानी को। अवध नर कीजे तो कुमार रघुवंशिन को कीजे जो हजूरी रघुराज सियारानी को।

७७—दीजे हमें वरदान यही मन लागो रहे पदपंकज ध्यानमें
जीभ रटे हरि नाम निरन्तर श्रीरामकथामृत की ध्वनि कानमें ॥
पाँय फिरै हरि मन्दिरमें श्रद्धा रहे सादर वेद पुराणमें।
नाथ सनेह तिहारेहिमें नित डूबीरहैं अखियाँ अँसुआनमें॥
७८—कीन्हों करार रमापति सों अब गर्भके बाहर आये जहानमें
भूलिरह्यो खिलवारनमें तरुनी अरु मित्रनके अभिमानमें॥
आई जरा मीचु घेरि लियो नहिं बात कछू कहि आई जबानमें
अन्त समय अब काहे बिसूरत बुढ़िरहीं अँखिया अँसुआनमें॥
१०१ केतेको उबारे केते चक्र लैके मारे कते अधमनको हरि नखसे विदारे हैं। घनश्याम श्याम प्यारे ऐसो ही स्वभाव हेरों गणिका अजामिलको क्षनमें उबारे हैं। दीनके दयाल तेरे नाम को प्रताप भारी गने जो न जात मोसों जोंन स्वर्गको सिधारे हैं। विनती हमारी राम कहो कृष्ण राधेश्याम गने जात तारे पै न गने जात तारे है।

७९—मायाको दिखायके छिपाय भगवंत लेत तबेसंत बुद्धि सों बतावत अनन्तको। धारें भगवंत जब मानुष वपुष तब संत भगवंत कहि गावें रसवन्तको॥ ईश्वर न कोऊ जीव नश्वर कुबुद्धी कहैं तिन्हें जीति बाद सन्त थापें सिया कन्तको। नाम को सुनायके जनावें रस रामरूप सन्त बिन कैसे कोउ जाने भगवन्तको॥

८०—कोई माल मस्त कोई गाल मस्त कोई तूती मैंना सूयेमें।
कोई खान मस्त कोई पान मस्त कोई राग रागिनी धूयेमें।
कोई जाति मस्त कोई पाँति मस्त कोई शतरंज चौपड़ जूयेमें।
एक राम मस्त बिन और मस्त सब पड़े अविद्या कूयेमें॥

८१-जे चतुराननके सुत चारि गही न विभूति रमे हरि माहीं। यद्यपि हैं हरि पूरणते अवलों रति हैं शुभ संतन माहीं। शेष समीप सुने हरिको यश शंभु समीप सदा चलि जाहीं। नाशत हैं शुभ गुणहूँ सबै औ कुसंगतिते सनकादि डराहीं॥

८२—एक रज रेणुका पर चिन्तामणि वारि डारों, वारि डारों विश्व सेवाकुञ्जके विहार पै। वृजकी पनिहोरिनि पर रती शची वारि डारों, रम्भाको वारि डारों गोपिनके द्वार पै। लतान की पतान पर कल्पतरु वारि डारों वैकुण्ठको वारि डारों कालिन्द्री की धार पै। कहत अभय राम एक श्रीराधेजीको जानत हों, सब देवनको वारि डारों नन्दके कुमार पै॥

८३--श्याम मन श्याम तन श्याम ही हमारो धन ऊधो हमें आठो याम श्यामहीं सों काम हैं। श्याम हिये श्याम पिये श्याम विन नाहीं जिये सम्पति समूह सो अपार शोभा धाम है॥ श्याम मति श्याम गति श्याम ही प्रतात तप आँधड़ेकी लाकड़ी अधार गति श्याम हैं। ऊधों तुम भये बौरे पाती लिये आये दौरे योग कहाँ राखें यहाँ रोम रोम श्याम हैं॥

८४ अवनीश अनेक भये अवनी जिनके डरसे सुर शोच सुखाहीं। मानव दानव देव सतावन रावण घाटि रच्यो जगमाहीं। ते मिलये धरि धूरि सुयोधन जे चलते वहु क्षत्रकी छाहीं। वेद पुराण कहै जग जान गुमान गोविन्दहि भावत नाहीं॥

८५ श्रीसत्या कौशिला मातुकी गोद मोद भरि लेटे हैं।
जगत प्रपंच रंचहू सुख ना दश दिशि हाथ समेटे हैं॥
श्रीसद्गुरु करुणेश कृपासे अविचल सुख पिय भेंटे हैं।
"श्रीरामवल्लभाशरण" डरें केहि बड़े बापके बेटे हैं॥

८६ राम हमार सबै सचराचर नहिं मानो तो यों लखि लीजै
नामके अक्षर चौगुने करि पुनि पंच मिलायके दो गुन कीजै॥
आठको भाग दिये रघुनाथ बचें युग अंक तहाँ मन दीजै।
मोहूमें राम हैं तोहूमें राम हैं खड्गमें राम सो खंभ भनीजै॥

नोट (इस विधि गणित क्यों करना चाहिये सो यथा)
प्रथम मनुष्यको संसारमें ४ प्रकारके पुरुषार्थ अर्थ, धर्म, काम और 'मोक्ष' के साधन करने पड़ते हैं, अतः प्रत्येक नामके अक्षरोंको चारसे गुणा किया जाना चाहिये पुरुषार्थ पंच भूतों की सहायतासे करने पड़ते हैं। उनके योग बिना सिद्धि नहीं होती अतः पांचका योग उनके साथ (सहायतारूप) कर देना चाहिये पुरुषार्थ साधन करते समय मनुष्योंको 'शीतोष्ण' 'सुख दुख' 'क्षु तिपिपासा' आदि द्वन्द्व सहन करने पड़ते हैं इस हेतु योगफलको पुनः दो गुणा करना चाहिये। अब उस गुणन फलको भगवत वाक्यानुसार 'अष्टधाप्रकृति के अनुसार यथा "भूमिरापो नलो वायुः खं मनो बुद्धि रेवचः। अहंकार इतीमे भिन्ना प्रकृति रष्ठधा॥" द्वारा आठसे भाग देनेपर अवश्य ही चेतन स्वरूप दो 'राम' के अक्षर बचेंगे। (अक्षरात्मक) पुरुषार्थ ही शेष रहेगा

८७ जो बस जगत समस्थ किये अरु जाको न आदि न अन्त लखावे। शुद्ध स्वतन्त्र अधोक्षज ईश रमाहु भूमै परि पार न पावें। सो भगवान भये बस भक्तके भक्त करै मन सो दिख-लावें। ऊखल बांधि तिन्हें यशुदा श्रीलाल कहौ कस नाच नचावें।

८८ जाय जो सुभट समर्थ पाय रिपु रारि न मंडै। जाय सो

यती कहाय विषय वासना न छंडै। जाय धनिक बिन दान जाय सोधन बिन धर्महिं। जाय सो पण्डित पढ़ि पुराण जो रति न सुकर्महिं ॥ सुत जाय मातु पितु भक्ति बिन। तिय सो जाय जेहि पति न हित। सब जाय दास तुलसी कहै जो न रामपद नेह नित।

८९—रामतो प्रकट त्रेता युग हीमें पै राम नाम चारो युग प्रकट बिराजें अभिराम हैं। राम निज धाम दियो अवध प्रजा जनहीको राम नाम नित्य भव तारक तमाम है॥ रटिये पवन मन वदन सों रसरंग रामते अधिक कृपा धाम राम नाम है।

९०—जाति पाँति न्यारी करी हमारी तुम्हारी नाथ केवटको कर्म एक नीके करि निहारिये। नाई से न नाई लेत धोबी ना धुलाई लेत देके उतराई नाथ जाति ना बिगाड़िये आप तो उतारि भवसागरसे पार करो सरिता उतारि हम कुटम्ब दिन गुजारिये मेरे घाट आये नाथ दीन्हें हौ उतारि मैं तुम्हारे घाट आऊँ नाथ मोहूको उतारिये॥

९१—तापसके वरदायक देव सबै पुनि बैर बढ़ावत बाढ़े। थोड़ेहि कोप कृपा पुनि थोड़े हि बैठिके जोरत तोरत ठाढ़े॥ ठोकि बजाय लिये गजराज अब काह कहों केहिसों रद काढ़े। यह हिय हेरि भजो तुलसी रघुनाथ सहाय सही दिन गाढ़े॥

९२—आपको आप हों नीके करि जानत रावरे नाम गढ़ायो भरायो। कीर ज्यों नाम रटे तुलसी औ कहें जग जानकी नाथ पढ़ायो। खेद सोई जो वेद कहै न घटे पुनि सो जेहि रघुबीर बढ़ायो। हों तो सदा खरको असवार तुम्हारे ही नाम गयंद चढ़ायो॥

६३—कोऊ एक यवन जरठ मग जात कहूँ शूकरके शावकने मारो ताहि धाइ के। जोर सों पुकारो मोहि मारो हैं हराम जाति ऐसे कहि प्राण गये अकुलाइके॥ गोपद समान भव वारिध सों पार भयोनामको प्रभाव ऐसो कहैं वेद गायके। प्रेम सों कहेगो जो राम नाम अचरज कहा निज धाम राम देत हैं जो चाहकै॥

६४—भाग्यो दश दिशा सब लोकपाल पास गयो नयो तेजचक्र चक्रे चून किये डारे हैं। ब्रह्मा शिव, कही यह-गही तुम टेव बुरी भक्तनको भेव नहिं जानों वेद धारे है। पहुँचो वैकुण्ठ जाय कह्यो दुक्ख अकुलाय त्राहि त्राहि राखो नाथ खरो तन जारे हैं कही मैं तो वस उनके तीन गुणको न मान मेरे भक्त वात्सल्य गुण सबही को टारे हैं।

६५—पूछि २ आये तहाँ शिवरीको आश्रम जहाँ कहाँ वह भागवती देखौं नैन प्यासे हैं दौरिके आय गई आश्रममें जानिके पधारे आप दूरिही से दण्डवत करी चष : भाषे हैं। रवकि उठाय लई हरितन पीर गई नई नीर झरी लगी मानो प्रेम प्यासे हैं। बैठे सुख पाइके सराहिवेही, काह कहों आजु मेरे मग दुख नाशे हैं।

६६—गंगसम नीर अरु सिन्धु सो गम्भीर नाहिं धीर काम मर्दन सो वीर नहीं कामसो। शुक सो न सन्त अरु ऋतु न बसन्त सम मुखसो न अङ्ग ना कुसंग वाम चाम सो॥ हितू सत संग सो न आन रसरंगमणि क्ली हनुमन्त सो न दयावन्त राम सो मंत्र तन्त्र पञ्चरात्रि सो न यन्त्र आन कछू मन्त्री ना सुमंत सो न मंत्र राम नाम सो॥

९७—एहो रघुराज महाराज श्रीरामचन्द्र तारोगे मोहितो लोग यश गावेंगे। गीध औ किरात कोल विप्र यवन सुनी बोल यह तो है पुरानी वात कौंन सुनि भावेंगे॥ ताते गणेश सब अधम नसे अधम जानि तारोगे मौहि तो लोग सुनि पावेंगे। नतरु-कृपालु बदनामी सब नामनकी लोगन जनाय अखवारमें छपावेंगे

९८—बापसों अधिक मातु होत है दयालु चित ताते सिय-नाम रामनामसे विशेष है। सीताराम सहित उचारजो करत नर नामापराध दशौ पावत ना पेश है। प्रवल प्रताप श्रीरामनाम को विराजे भानु सिया नाम जनहत शरद निशेश हैं। श्रीयुगल विहार श्रीराम रूप लीला धाम सीताराम२ भनत गणेश हैं।

९९—रामको नाम जपें जगभीति कहां प्रभु राम अभय पद दानी। पाप कुताप विनाशक एक सजीवन औषध हैं सुख दानी यों रसरंगमणी प्रहलाद सुनी मुख रामहिंकी रट ठानी। तात तकै किन? गात समीप श्रीराम कृपा भौ पावक पानी॥

१००—कौन सताय सके तेहिको जग रामको नाम अधारहै जाको दीन हलाहल पान कराय कियो गुण सो सुख पाय सुधाको॥ बाँधिके बारि डुबाय दियो, आगिमें पुनि हरिनाकुश ताको। श्रीरामके नाम प्रताप से देखो भयो प्रहलादको बार न बाँको॥

१०१ सोई जननी सो पिता सोइ भ्रात सुभामिनि सो सुत सो हित मेरो। सोई सगो सुसखा सोई सेवक सो गुरु सो सुत साहिव चेरो॥ सो तुलसी प्रिय प्राण समान कहाँ लों बनाय कहों बहुतेरो। जो तजि देह सों गेह सनेह श्रीरामको सेवक होय सवेरो॥

१०२—तुमहीं कहत सुत दारा विन गति नाहिं तुमहीं कहत यह

तो फन्दाकी गली है। तुमही दश इन्द्रीनको नाथ अति प्रचण्ड कीन्ह तुमहीं कहत इन्हें जीते सो बली हैं। तुमहीं कहत नाथ काया राखि धर्म करो तुमहीं कहत काया धर्महीं सों पली है। सुन्दर कहत नाथ दूजो कोउ ठाकुर नाहिं जाके आगे न्याय हित हम आप चली हैं।

१०३—स्वांग अनेक किये जगमें प्रभु रीझहु जेहि सोरूप बनाई। अण्डज पिण्ड वृक्ष समूह धरे नर देह महा सुखदाई॥ प्रभु रीझेउ तो वरदान यही हरि भक्ति औ मुक्ति लहों मन भाई। नहिं डाटि गणेश कहौ हमसे जनि ऐसे देह धरो पुनि आई॥

१०४—जिनकी हमेश चली हुक्में महि मण्डलमें न अड़ी कहुँ आड़ी। सोने ओ चाँदीकी कौन कहे घरमें मुकता मणि माणिक गाड़ी॥ भाखें प्रधान पयान समय सुख सम्पति सेज चले सब छाँड़ी। बहु चाँदीके बासन गाढ़े परे मरि पीपर टाँगि छदामकी हाँड़ी॥

१०५—नीर विन मीन जैसे क्षीर विन शिशु जैसे पीर विना औषधि क्यों रह्यो जात हैं। चन्द्र विन चकोर जैसे चातक ज्यों स्वाँति बुन्द चन्दन की चाह करि सर्प अकुलात है। निर्धनी ज्यों धन चाहै कामिनी ज्यों कन्त चाहै जाके ऐसी चाह ताको कछु ना सुहोत हैं। प्रेमको प्रवाह ऐसो प्रेम तहाँ नेम कैसो सुन्दर कहत राम प्रेमिन की बात है।

१०६—वारिध आदर दान दियो मघवा रविको गज बाजि चढ़ायो। श्री, मणि, दे हरि मान कियो ओ हलाहल इन्दु ते ईश मनायो॥ बाँटि सुरा असुरन हित सों अरु सुरनको अमृत पान

करायो। कुंभज पान कियो जवहीं सवही हित से कोउ काम न आयो॥

१०७—परहित रत रहिवेकी बुद्धि धारि तीखे तपसों जराय मद लोभ मोह कोह काम। मानको मिटाय ध्यान राखि परितोष बानि, सहिहौं सकल सुख दुख नीर शीत घाम। आइहैं दिवस कब ऐसो अभिराम जव विमल वनाय हिय जाय श्रीअवध धाम गद्गद कंठ सों श्रीप्रमोदवन धाय, धाय टेरहुँगो रात दिन श्री सीताराम सीताराम।

१०८-श्याम घन तन पर विज्जुसे दशनपर माधुरी हँसन पर खेलत खगी रहे। खौरि वारे भालपर लोचन विशाल पर उर बन माल पर ज्योति जगी रहे॥ जंग जुगवान पर मंजुमुरवान पर, सियपति सुजान पर प्रेम सों पगी रहे। नूपुरनगन पर कञ्जसे पगन पर आनँद मगन मेरी लगन लगी रहे॥

१०९—रुचिर न वनाये अंग अँग श्यामा श्याम परी धृक्कार जग नानो कर्म कीवेपै। पाँयन का धोय निज करसे न पान कियो आली अँगार पड़े शीतल जल पीवेपै॥ विचरे न श्रीबृन्दावन कुञ्जन लतान तरे गाज परै अन्य फुलवारी रस लीवेपै। "श्रीललित किशोरी" बीते वरष अनेक दृग देखे नहीं प्राण प्यारे क्षार ऐसे जीवेपै॥

११०—रामको नाम रटें बुद्धि बल प्रवल होत रामको नाम रटे उत्तम कुल पावे है। रामको नाम रटे चक्रवर्ती राज्य मिलै रामको नाम इन्द्रासन पै विठावे है॥ रामको नाम रटें ऋद्धि अरु सिद्धि मिलैं। रामको नाम रटै परम पद पावे है॥ रामको नामरटैनिरामयनरदेह मिलै राम राम कहत निरवान ह्वै जावे है।

१११-राम कहें बनि जात सबै परलोक औ लोक महा सुखदाई। गीध अजामिल औ गणिका शिवरी तरिग ई फल जूठ खवाई॥ जा बल शंभु कियो विष पान महोदधि पान कियो घटजाई। बद्री भजौ सोई राम सिया जग जीवनको फल इतनोहि भाई॥

११२—जबलों सुख संयुत देहनिरोग नहीं तन माहिं जरा नियराई। न घटी जबलों इन्द्रीय शक्ति अरु मोतिहुके दिन दूर दिखाई॥ तबलों परलोक उपाय प्रवीण करो सब भांति वृथा दिन जाई। जब भवन भभूकत आग लगै तब कूप खने किमि आग बुताई॥

११३—राम नाम मातु पितु स्वामी समरथ हित आस राम नामहींकी भरोसो राम नामको। प्रेम रामनाम हीं सों नेम राम-नाम हीं को जानों-ना परम पद दाहिनों न बामको॥ स्वारथ सकल परमारथको राम नाम, राम नाम हीन तुलसी न काहू काम को। रामकी शपथ सर्व्वस मेरे राम नाम काम धेनु काम तरु मोसे क्षीण चामको॥

११४—पाय सुदेह विमोह नदी तरणी न लही करणी न कछू की। राम कथा वरणी न वनाय सुनी न कथा प्रहलाद न ध्रू की॥ अव जोर जरा जरि गात गयो मन मानि गलानि कुवानि न मूकी। नीके कै ठीक दई तुलसी अवलम्ब वड़ी उर आखर दूकी।

११५—भालपे हीरन की कलँगी लटकें मुकतावलीके लरसे हैं। आनन औज कलाधरसे "लछिराम" हँसें छठा श्रीवरसे हैं॥ वाँहें मृणाल सी कञ्जन से कर मौजें उमाहै हराहर से हैं। सातहु द्वीपमें श्रीरघुवीर प्रकाश प्रताप दिवाकर से है॥

११६—वारिज वीर वधूटी प्रभाकर मन्द परै रजनी परमाली।

ज्वालामुखी बढ़वानलसी "लछिराम" त्यों धूमधुजी शिखराली॥
क्षार करैं खलवंशनको अवतंश हितून पै अंश गुलाली।
श्रीरघुनाथप्रताप लौं भूपर श्रीरघुनाथप्रताप की लाली॥

११७—राम सम राम मैथिली सो मैथिली की प्रभा लखन सो लखन सहायक हमेशको। "लक्षिराम" ललित भरतसम :शत्रुहन सम ललित भरत शत्रुहन हैं सुभेषको॥ कैकेई सो कैकेई सुमित्रा सो सुमित्रा देवि दानी रघुवंश वरदानि यों हमेशको। कामधेनु श्रीकौशिल्या सी कल्पतरु कौशल सो कौशलनगर कौशिलेशको॥

११८—माधुरी हँसनि हार हीरक रदन मोती जोड़े लाल अधर सुरङ्ग अनुमाने को। डोरे नैन माणिक फटिक मणि स्वेतताई नीलम चुनीन पूतरीन परमानेको॥ "लछिराम" तिलक काश्मीरी भाल पुखराज रङ्ग मङ्गलीक मरकत वरमानेको। श्रीरामचन्द्र बदनके बहाने मिथिला में खोल्यो मदन जवाहिरी जवाहिर खजाने को।

११९-शंभु शराशनै तौरे सनाल सो भाल बिशाल प्रताप सुहावै।
त्यों "लछिराम" स्वयंबर में श्रीमिथिलेश अनङ्ग प्रभातन छावै॥
श्रीराम गलेकी जयमालको सुमैथिलीयों समता सरसावै।
मानो रमा रतनाकर में रतनावली श्रीहरि को पहिरावै॥

१२०—सिन्धुमें बतावै कोई चन्द्रमें लखावै कोई वामके अधर कोई शेष राजधानी में। सिन्धुमें जो होतो तो पानी हू न खार होतो चन्द्रमें जो होतो ना कलङ्ककी निशानीमें॥ वामके अधर होतो पति को न काल होतो विष नहीं होतो यदि शेष राजधानीमें। ताते सुजन जन मनमें विचारि देखो अमृत बूँद बहै सन्तनकी बानीमें।

१२१—दौलत पछितानी जहँ धर्महूँ को लेश नाहिं विद्या पछितानी घट नीचनमें जायके। माता पछितानी पुत्र जानत नहिं कुलकी रीति नारी पछितानी पति मूरखको पाइके॥ रैयत पछितानी जहँ नृपति अविवेकी भयो भावी पछितानी दुक्ख सुजनको दिवायके। देखत के मानुष अरु कर्म सब पशुन के ज्वानी पछितानी ऐसे डीलनमें जायके॥

१२२—दैके दरखास वाइजलास श्रीसियाजू के हाकिम हजूर प्रभु आपको बुलावेंगे। अधम उधारन वर विरद तरमीमके पावन पतित नाम हेरिके भगावेंगे॥ सबै उज्जहाद करि पेश दरवेशन की साखी दे गीध यवन दाद जो पावेंगे। तो हों गणेश हेरि करुणा गुण रावरे मोहि नहिं तारो तो कुरक सब करावेंगे॥

१२३-भूमिके खनेते जल आप ही कढ़त जैसे पढ़त २ पूरी पंडिताई पाई है। ग्रास २ खात संतुष्ट ज्यों चलेते पन्थ आपही सिरात घर जाय ठहराई है। काष्ट के घिसे ते आग आप ही प्रकटात जैसे मथत २ दूधतर माखन ज्यों पाई है। जानि यहै बात जो पै ठीक "रसरंग मणी" राम नाम रटै राम आपै दिखाई है॥

१२४—शोभित सतीके सती भारती रतीके कर। सेवित सुतीके सुरतीके सुरतीके सुरतीके हैं॥ बिमल रतीके विरतीके दानि। शुद्ध विरतीके सुरतीके सुरतीके हैं॥ "रसिक बिहारी" सुगतीके सुमती के नित्य, कारक पतीके द्रढ़ हारक छतीके हैं॥ देव देव वन्दनीके निमिवंश चन्दनीके, युग नीके पदकंज मिथिलेश नन्दिनीके हैं॥

१२५—पाप शैल हाके पाकशासन कलाके संग हेतु करताके

भार हरन धराके हैं॥ देन मनसाके शैलजाके जलजाके हाल। जाके ध्यान छकि कटे संकट न काके हैं॥ कन्तकमलाके लोक-पालें बलजाके वेष बास के करैया "हनुमान" जियराके हैं॥ ओज सबिताके पुंज कलपलताके। महा मुक्त पताके पाँय जनक सुताके हैं॥

१२६-परमित परमा तरंग यमुना लौं लसैं। मंगलीक मरकत नूपुर की श्रेणी में॥ सैकत पराग भाग संगमी सकल फल। "लक्षिराम" शारदा छलक पाप छेनी में॥ नखन की कौधैं आँगुरीन पै अभंग गंग, महिमा प्रसंग मौलि मनोरथ देनी में॥ मज्जत महेश हीरे सीरे त्रिभुवन जन। राव रामचन्द्र चरणाम्बुज त्रिवेणी में॥

१२७—शंख सुधा शशि धेनु रम्भा कल्पतरु मणि। मालाकार महिमा नखनके बरन में। अंकुश गजेन्द्र बाजि कमला कमल धनु। खल दण्ड कुलिश गरल आचरण में॥ "लछिराम" जन मन लाली अनुराग मद, वेषध्वज वैद्यराज आनन्द भरन में॥ शोभासिन्धुमथि रच्यौ मनमथ मानो चारु। चौदहौ रतन श्रीरामचन्द्र के चरण में॥

१२८—गुरू अवज्ञा एक पुनि हरिजन निन्दा ताप। गनें ब्रह्ममें भेद पुनि करै नाम बल पाप। करै नाम बल पाप नाम परताप न जाने। विन श्रद्धा उपदेश दोष श्रुति शास्त्र न माने॥ मानहिं तजि रघुनाथ भजै निज इन्द्री वश उर। ए दश तजि अपराध जपै तब नाम फलै फुर॥

१२९—ज्ञान औ विराग योग याग तप त्याग करै सिद्धि भये तेरे माया बीचही में लूटती। तीरथ वृतादि दान साधन अतुल करै पचि मरै चावल लहै न भूसी कूटती॥ भक्ति महारानी भवभानी

युक्ति जानि परे ताहूमें तो लालची लवारी आदि जूटती। शंभु-शिर सुरसरि धरि भनी रसरंगमणि श्रीराम नाम जाप विन ताप त्रय न छूटती ॥

१३०—पवन ज्यों जलद्धपर वज्र ज्यों महीद्र पर क्रोध ज्यों सिद्ध पर भानु तमदापपै। ज्ञान अज्ञानपर मान-अपमानपर कुयशपर दान ज्यों कृपाण शत्रुताप पै॥ कुलपै कपूत ज्यों सपूत त्यों कपूत पर जैसे परभूत दनुपूतन कलाप पै। श्रीरघुराज रावण पै गङ्ग त्यों अपावन पै जैसे दाव दावन पै श्रीरामनाम पाप पै॥

१३१—सुनि कान दिये मित नेम लिये रघुनाथहिके गुण गाथ-हिरे। सुख मन्दिर सुन्दर रूप सदा उर आनि धरे धनु भाथहिरे। रसना निशि वासर सादर सों तुलसी जपि जानकीनाथहिरे। करि संग सुसंत सुशीलन सों तजि क्रूर कुपंथ कुसाथहिरे॥

१३२—पद पंकजात की पुनीतता अहिल्या जानी। शुण्डा दण्ड बाहु वल जानो है पिनाक ने॥ राम रोष जानों सिंधु शूल सहि बाँधो गयो। रीझि जानी राजा भौ विभीषण बराक ने॥ काय कमनीय कोमलाई श्रीजानकीने जानी जानी है कठोरताई रावण निशाक ने॥ राम रीझि नीके करि जानत गुलामराम। जाको काहू के न द्वार परो कवहूँ झाँकने॥

१३३—देवनकी भीति सहलोकनि अनीति मेंटि आये रिपु जीति लिये साथ खास दासने। वाजत निशान पुर धूम असमान देखि साजिके विमान आय अग्र पाकशाशने। क्षत्र चंवर व्यजन अनुज लिये वैजनाथ वेद गान सोहत सुदीप्त वृक्ष बासने। राजनके राज महाराजा श्रीरामचन्द्र मैथिली समेत राजत रतन सिंहासने॥

१३४—प्रकटे आनन्द सुनि नन्द दुख द्वन्द भाज परम आनन्द आज अनत है ही नहीं। परम उदार श्रीनन्दरायजूके मनकी तरंग जाति मुखसे कही नहीं ॥ अश्व, गज, धाम, धन स्यंदन, महीको दान गोकुलमें एकहू गऊ अब रही नहीं ॥ कवि श्रीलाल खुशहाल सब गोप ग्वाल नन्द कहैं लेहु २ याचक नहीं नहीं ॥

१३५—देखि दान द्वगसे धनेशहू लजाय गये कहिवेकी शक्ति-शेषहूमें तो रही नहीं । धन्य २ भाषें महेश औ गणेश दोऊ नन्दकी उदारता तो जात है कही नहीं। सोचत सुरेश कछु शेषहू रहेगो आज द्वगसे श्रीलाल ऐसो दाता दीखही नहीं। टेरि टेरि द्विजन गहावें गऊ ढेर ढेर नन्द कहैं लेहु लेहु याचक नहीं नहीं ॥

१३६—अवलौं नशानो अब न नशैहों।
श्रीरामकृपा भव निशासिरानी जागे फिरि न डसैहों ॥
पायो नाम चारु चिन्तामणि उर करते न खसैहौं ।
श्यामरूप शुचि रुचिर कसौटी चित कंचनहिं कसैहौं ॥
परवश जानि हँस्यो इन इन्द्रिन जिन वश ह्वै न हँसैयो ॥
मन मधुकर प्रण करि तुलसी रघुपतिपद कमल बसैहौं ॥

१३७—यही कह्यो सुत वेद चहूँ, श्री रघुवीर चरण चिन्तन तजि नाहिं न ठौर कहूँ ॥ जिनके चरण विरञ्चि सेय सिद्धि पाई शंकर हूँ । शुक सनकादि मुक्त विचरत तेउ भजन करत अजहूँ ॥ यद्यपि परम चपल श्री सन्तत थिर न रहति कतहूँ ॥ श्रीहरि पद पङ्कज पाय अचल भई कर्म वचन मनहूँ ॥ करुणा-सिन्धु भक्त चिन्तामणि शोभा सेवत हूँ । और सकल सुर असुर ईश सब खाये उरग छहूँ ॥ सुरुचि कह्यो सोई सत्य तात अति

पुरुष वचन जबहूँ । श्रीतुलसीदास रघुनाथ विमुख नहिं मिटै विपति कबहूँ ॥

१३८—एसेही जन्म समूह सिराने ।

प्राणनाथ रघुनाथसे प्रभु तजि सेवत चरण विराने। जे जड़ जीव कुटिल कायर खल केवल कलिमल साने । सूखत वदन प्रशंसत तिन कहँ हरिते अधिक करि माने। सुखहित कोटि उपाय निरन्तर करत न पाँय पिराने ॥ सदा मलीन पन्थके जल ज्यों कबहुँ न हृदय थिराने यह दीनता दूरि करवे कहँ अमित यतन उर आने ॥ तुलसी चित चिन्ता न मिटै विन चिन्तामणि पहिचाने ।

१३६—जाके प्रिय न राम वैदेही ।

तजिये ताहि कोटि वैरी सम यद्यपि परम सनेही ॥ तज्यो पिता प्रहलाद विभीषण बन्धु भरत महतारी । बलि गुरु तज्यो कंत ब्रजवनितन भये जग मंगलकारी । नातो नेह रामके मनियत सुखद सुसेव्य जहाँ लों । अंजन कहा आँखि जेहि फूटै बहुते कहों कहाँ लों ॥ तुलसो सो सब भाँति परम हित पूज्य प्राण ते प्यारो । जासों होय सनेह रामपद यह तो मतौ हमारो ॥

१४०—कबहिं दिखाइहौ हरिचरण ।

शमन सकल कलेश कलिमल सकल मंगल करण ॥ शरद भव सुन्दर तरुणतर अरुण बारिज वरण । लक्ष्मी लालित ललित करतल छवि अनूपम धरण ॥ गंगजनक अनंग अरिप्रिय कपट बटु बलि छरण ॥ विप्र नृग तिय वधिकके दुख दोष दारुण दरण सिद्धि सुर मुनि वृन्द वंदित सुखद सब कहँ शरण । सकृत उर आनत जिनहिं जन होत तारण तरण । कृपासिन्धु सुजान रघु-

वर प्रणत आरति हरण। दरश आश पियास तुलसी दास चाहत मरण ॥

१४१—श्रीजानकी जीवनकी वलि जैहों।

चित कहैं राम सीय पग परिहरि अव न कहूँ चलि जैहों। उपजी उर प्रतीति सपनेहु सुख प्रभुपद विमुख न पैहौं ॥ मन समेत या तनके बासिन यहैं सिखावन दैहौं। श्रवणनि और कथा नहिं सुनिहों रसना और न गइहौं। रौकिहौं नयन विलोकत औरहि शीश ईश ही नइहौं। नातों नेह राम सों करि सब नाते नेह बहैहों ॥ यह क्षर भार ताहि तुलसी जग जाको दास कहैहों।

१४२—जो पै रहनि राम सों नाहीं।

तौ नर खर कूकर शूकर सम जाय जियत जगमाहीं। काम क्रोध मद लोभ नींद भय भूख प्यास सबहीके। मनुज देह सुर साधु सराहत जो सनेह सियपीके ।। शूर सुजान सपूत सुलक्षण गनियत गुण गरुआई। बिन हरि भजन इँदारुणके फल तजत नहीं करुआई ॥ कीरति कुल करतूति भूति भलि शील स्वरूप सलोने। तुलसी प्रभु अनुराग रहित जस सालन साग अलौने।

१४३—कबहुँ क अम्ब अवसर पाय ॥

मेरिहू सुधि द्यायवी कछु करुण कथा चलाइ ।।१॥ दीन सब अँग हीन छीन मलीन अघी अघाइ। नाम लै भरै उदर एक प्रभु दासी दास कहाइ ।।२॥ बूझि हैं है कौन कह्यो नाम दशा जनाइ। सुनत राम कृपालु के मेरी बिगरीहू बनिजाइ ॥३॥ श्रीजानकी जगजननि जनकी किये बचन सहाइ। दासतुलसी तरै भव तब नाथ गुणगण गाइ ॥४॥

१४४—जो पै जिय जानकी नाथ न जाने।
तौ सब कर्म धर्म श्रमदायक ऐसेहि कहत सयाने॥ जे सुर सिद्ध मुनीश योगविद वेद पुराण बखाने। पूजा लेत देत पलटे सुख हानि लाभ अनुमाने॥ काकोनाम धोखेहू सुमिरत पातक पुञ्ज सिराने। विप्र वधिक गज गृद्ध कोटि खल कौनकेपेट समाने॥ मेरुसे दोष दूरि करि जनके रेणुसे गुण उर आने। तुलसीदास तेहि सकल आस तजि अजहुँ न भजहि अयाने।

१४५—ताँवे सों पीठि मनहुँ तन पायो।
नीच मीचु जानत न शीशपर ईश निपट विसरायो॥ अवनि रवनि धन धाम सुहृद सुत को न इनहिं अपनायो। काके भये गये संग काके सब सनेह छलछायो॥ जिन भूपन जग जीति बाँधियम अपनी बाँह बसायो। तेऊ काल कलेऊ कीन्हें तू गिनती कब आयो॥ देखि बिचारि सार का साँचो कहा निगम निज गायो। भजहि न अजहुँ समझि तुलसी तेहि जेहि महेश मन लायो।

१४६—पावन प्रेम रामचरणकमल जन्म लाहु परम।
श्रीरामनाम लेत होत सुलभ सकल धरम॥ योग मख विवेक विरति वेद विदित करम। करिबे कहँ कटु कठोर सुनत मधुर नरम॥ तुलसी सुनि जानि बूझि भूलै जनि भरम। तेहि प्रभुको तू होउ जेहि सब ही की शरम॥

१४७—भरोसो जाहि दूसरो सो करो।
मोकों तो रामको नाम कल्पतरु कलि कल्याण फरो॥ कर्म उपासन ज्ञान वेद मत सो सब भाँति खरो॥ मोहितो श्रावणके अन्धे ज्यों सूझत रंग हरो॥ चाटत रह्यो श्वान पातरि ज्यों

कबहुँ न पेट भरो। सो हौं सुमिरत नाम सुधारस पेखत परसि धरो। स्वारथ औ परमारथहू को नहिं कुञ्जरो नरो। सुनियत सेतु पयोधि पषाननि करि कपि कटक तरो। प्रीति प्रतीति जहां जाकी तहँ ताको काज सरो॥ मेरे तो माई बाप दोऊ आखर हौं शिशु अरनि अरो॥ शंकर साखि जो राखि कहौं कछु तौ जरि जीह गिरो। अपनो भलो श्रीरामनामहिं ते तुलसीहि समझि परो॥

१४८—मैं हरि पतित पावन सुने।
मैं पतित प्रभु पतित पावन दोऊ बानक बने॥ व्याध गणिका गज अजामिल साखि निगमनि भने। और पतित अनेक तारे जात का पँह गने॥ जानि नाम अजानि लीन्हे नरक यमपुर मने। दासतुलसी शरणआयो राखिये अपने।

१४९—यों मन कबहूँ तुमहिं न लाग्यो।
ज्यों छल छाँड़ि स्वभाव निरन्तर रहत विषय अनुराग्यो॥ ज्यों चितई परनारि सुने पातक प्रपंच घर घरके। त्यों न साधु सुर-सरि तरंग निरमल गुण गण रघुवरके॥ ज्यों नासा सुगन्ध रसवस रसना षटरस रति मानी। श्रीरामप्रसाद माल जूठनि लगि त्यों न ललकि ललचानी॥ चन्दनचन्द्रवदनि पट भूषण ज्यों चह पामर परस्यो। त्यों रघुपति पद पद्म परशको तन पातकी न तरस्यो॥ ज्यों सब भांति कुदेव कुठाकुर सेये वपु वचन हिये हूँ। त्यों न राम सुकृतज्ञ जे सकुचत सकृत प्रणाम किये हूँ॥ चंचल चरण लोभ लगि लोलुप द्वार द्वार जग बागे। श्रीरामसीय आश्रमनि चलत त्यों भये न श्रमित अभागे। सकल अङ्ग पद विमुख नाथ मुख नामकी ओट लई है। है तुलसीहि परतीति एक प्रभु मूरति कृपा मई है॥

१५०—श्रीराम राम रमि राम राम रटि राम राम जपि जीहा।
श्रीराम नाम नव नेह मेहको मन हटि होउ पपीहा॥ सब साधन
फल कूप सरित सर सागर सलिल निराशा। श्रीराम नाम
रति स्वाँति सुधा शुभ सीकर प्रेम पियासा। गरजि तरजि
पाषण बरषि पवि प्रीति परखि जिय जाने। अधिक अधिक
अनुराग उमँग उर पर परमित पहिचाने॥ श्रीराम नाम गति
राम नाम मति राम नाम अनुरागी। ह्वै गये हैं जे होहिंगे
त्रिभुवन तेहि गनियत बड़भागी॥ एक अंग मग अगम गवन
करि बिलम्बन क्षण क्षण छाहैं। तुलसी हित अपनो अपनी दिशि
निरुपधि नेम निबाहैं।

१५१—श्रीराम राम राम जीह जौलों तू न जपि है। तौलों तू
कहूँ ही जाय तिहूँ ताप तपि है॥ सुरसरि तीर बिन नीर दुख
पाइ है। सुरतरु तर तोहि दुख दारिद सताइ है॥ जागत बागत
सुख सपने न सोइ है। जनम जनम युग युग जगरोइ है॥
छूटिवेके यतन बिशेष बांधो जाइ है। होइ है विष भोजन जो
सुधासानि खाइ है॥ तुलसी बिलोकि तिहुँ काल तोसे दीन को।
श्रीराम नाम हीं की गति जैसे जलमीनको॥

१५२—कबहुँ सो कर सरोज रघुनायक धरि हौ नाथ शोश मेरे।
जेहि कर अभय किये जन आरत बारेक बिबश नाम टेरे॥
जेहि कर कमल कठोर शंभु धनु भंजि जनक संशय मेंटो।
जेहि कर कमल उठाय बन्धु ज्यों परम प्रीति केवट भेंटो॥
जेहि कर कमल कृपालु गीध कहँ पिण्ड देय निज लोक दियो।
जेहि कर वालि बिदारि दास हित कपि कुलपति सुग्रीब कियो।
आयो शरण सभीत बिभिषण जेहि कर कमल तिलक कीन्हों।

जेहि कर गहि शरचाप असुर हति अभय दान देवन दीन्हों॥ शीतल सुखद छाँह जेहिकर की मेटति पाप ताप माया। निशि बासर सोइ कर सरोजकी चाहत तुलसीदास छाया॥

१५३-काहू भाँति कृपासिन्धु मेरी ओर हेरिये, मोकों और ठौर न सुटेक एक तेरी है। सहस शिलाते अति जड़ मति भई है। कासों कहों कौने गति पाहनहिं दई है। पदराग याग चहौं कौशिक ज्यों कियो हैं। कलिमल खल देखि भारी भीत हियो है। करम कपीश बालि बली त्रास त्रस्यो हौं, चाहत अनाथ नाथ तेरी बाँह बस्यो हौं। महा मोह रावण विभीषण ज्यों हयो हौं। त्राहि तुलसीश त्राहि तिहूँ ताप तयो हौं।

१५४-सुमिरि सनेह सों तू नाम राम रायको। संबल असंबलको सखा असहायको। भाग हैं अभागेहू को गुण गुणहीन को॥ गाहक गरीब को दयालु दानी दीनको। कुल अकुलीन को सुनी हैं वेद साखी हैं, पाँगुरे को हाथ पाँव आँधरे को आँखी हैं। माय बाप भूखे को अधार निराधार को। सेतु भव सागर को हेतु सुख सारको। पतित पावन श्रीराम नाम सो न दूसरो सुमिरि सुखेत भयो तुलसी सो ऊसरो॥

१५५—रुचिर रसना तू राम राम क्यों न रटत। सुमिरत शुभ सुकृत बढ़त अघ अमङ्गल घटत॥ विन श्रम कलि कलुष जाल कटु कराल कटत। दिनकर के उदय जैसे तिमिर तोम फटत॥ योग याग जप बिराग तप सुतीर्थ अटत। बांधिवे को भव गयंद रेणु की रजु बटत॥ परिहरि सुमिरण सुनाम गुञ्जा लखि लटत। लालच लघु तेरो लखि तुलसी तोहि हटत॥

१५६—सुनि मन मूढ़ सिखावन मेरो। हरिपद विमुख लह्यो

न किनहु सुख शठ यह समझि सवेरो। विछुरे रवि शशि मन नयनन ते पावत दुख बहुतेरो ॥ भ्रमत श्रमित निशि दिवस गगन महँ तहँ रिपु राहु बड़ेरो। यद्यपि अति पुनीत सुरसरिता तिहुँपुर सुयश घनेरो ॥ तजे चरण अजहूँ न मिटत नित वहिवो ताहू केरो । छुटै न विपति भजे बिन रघुपति श्रुति सन्देह निबेरो। तुलसीदास सव आस त्यागि करि होउ सीयराम कर चेरो ॥

१५७—कलि नाम काम तरु रामको। दलनहार दारिद दुकाल दुख दोष घोर घन घामको ॥१॥ नाम लेत दाहिनों होत मन वाम विधाता वामको । कहत मुनीश महेश महातम उलटे सीधे नामको ॥२॥ भलौ लोक परलोक तासु जाके वल ललित ललाम को । तुलसी जग जानियत नाम ते शोचन कूच मुकाम को ॥३॥

१५८—श्रीरामचरण अभिराम कामप्रद तीरथ राज विराजै। श्रीशङ्कर हृदय भक्ति भूतल में प्रेम अक्षयवट राजै ॥ श्याम चरणपद पृष्ठ अरुखतल लसत विशद नख श्रेणी। जनु रवि सुता शारदा सुरसरि मिलि चली ललित त्रवेणी ।२। अङ्कुश कुलिश कमल ध्वज सुन्दर भँवर तरंग विलासा। मज्जहिं सुर सज्जन मुनि जन मन मुदित मनोहर बासा ॥३॥ विन विराग जप याग योग व्रत विन तीरथ तन त्यागे । सब सुख सुलभ दासतुलसी प्रभुपद प्रयाग अनुरागे ॥४॥

१५९—गये रामशरण सबको भलो। गनी गरीब बड़ौ छोटो वुध मूढ़ हीनवल अतिवलो ॥१॥ पङ्गु अंध निर्गुणी निसंबल जो न लहै याचे जलौ। सो निरबह्यो नीके जो जनमि जग

श्रीराम राज मारग चलो ॥२॥ श्रीनाम प्रताप दिवाकर करते गरत तुहिन ज्यों कलिमलो। सुतहित नाम लेत भवनिधि तरि गयो अजामिल सो खलो ॥३॥ प्रभुपद प्रेम प्रणाम कामतरु सद्य विभीषण को फलो। तुलसी सुमिरत नाम सबन को मंगलमय नभ जल थलो ॥४॥

१६०—जो जीवनका हैं लक्ष सार, श्रीराम राम रटि बार बार।
यहहृत्तन्त्री का मृदु उचार, श्रीराम राम रटि बार बार।
धन धराधाम सुत पितु दारा, क्षणभंगुर है यह सुख सारा।
चिर नूतन यह कर इससे प्यार, श्रीराम राम रटि बार बार ॥२॥
जड़ चेतन बन उपबन सारे, भूमि अग्नि रवि शशि तारे।
सबमें सियपति करते विहार, श्रीराम राम रटि बार बार ॥३॥
संसार सिंधु बिस्तृत महान, कामादि जीव जिसमें प्रधान।
श्रीराम नाम "हरिहर" अधार, श्रीराम राम रटि बार बार ॥४॥

१६१—ऐसी मूढ़ता या मनकी। परिहरि रामभक्ति सुरसरिता आश करत ओसनकी ॥ धूम समूह निरखि चातक ज्यों तृषित जानि मति घनकी। नहिं तहँ शीतलता न बारि पुनि हानि होत लोचनकी ॥ ज्यों गच काँच बिलोकि सेन जड़ छाँह आपने तनकी। टूटत अति आतुर अहार वश क्षति बिसारि आननकी ॥ कहलौं कहौं कुचालि कृपानिधि जानत हौ गति जनकी। तुलसी-दास प्रभु हरहु दुसह दुख करहु लाज निज पनकी ॥

१६२—जो पै कृपा रघुपति कृपालु की बैर और के काह सरै। होय न बाँको बार भक्त को जो कोउ कोटि उपाय करै। तकै नीच जो मीच साधुकी सो पामर तेहि मीचु मरै। वेद विदित प्रहलाद कथा सुनि को न भक्ति पथ पाँव धरै। गज उधारि

हरि थप्यो विभीषण ध्रुव अविचल कबहुँ न टरै। अम्बरीषकी श्राप सुरति करि अजहुँ महा मुनि ग्लानि गरै। सौधों कहा जो न कियो सुयोधन अवुध आपने मान जरै। प्रभुप्रसाद सौभाग्य विजय यश पाण्डवको वरिआई वरै। जो जो कूप खनैगो पर कहँ सो शठ फिरि तेहि कूप परै। सपनेहु सुख न सन्त द्रोही कहँ सुरतरु सोउ विष फरनि फरै॥ हैं काके द्व शीश ईशके जो हठि हरिजनकी सीम चरै। तुलसीदास रघुवीर बाहु बल सदा अभय काहू न डरै।

१६३—नाचत ही निशि दिवश मस्लो। तवहीं ते न भयो हरि थिर जवतें जीव नाम पस्लो॥ बहु वासना विविध कञ्चुकि भूषण लोभादि भस्लो। चर अरु अचर गगन जल थलमें कौन न स्वाँग कस्लो॥ देव दनुज मुनि नाग मनुज नहिं याचत कोउ उवरो। मेरो दुसह दरिद्र दोष दुख काहू तो न हरो॥ थके नयन पद पाणि सुमति बल संग सकल विछुरो। अब रघुनाथ शरण आयो जन भव भय विकल डरो॥ जेहि गुण ते बस होउ रीझि तुम सो सब मोहि विसरो। तुलसीदास निज भवन द्वार प्रभु दीजै रहन परो॥

१६४—कृपा सो धों कहाँ विसारी राम॥ जेहि करुणा सुनि श्रवण दीन दुख धावत हौ तजिधाम॥ नागराज निज बल विचारि हिय हारि चरण चित दीन। आरत गिरासुनत खगपति तजि चलत विलम्ब न कीन। दितिसुत त्रास त्रसित निशिदिन प्रहलाद प्रतिज्ञा राखी॥ अतुलित बल मृगराज मनुज तन दनुज हत्यो श्रुति साखी। भूप सदसि सब नृप बिलोकि प्रभु राखि कह्यो नर नारी॥ बसन पूरि अरि दर्प दूरि करि भूरिकृपा

दनुजारी। एक एक रिपु ते त्रासित जन तुम राखे रघुवीर। अब मोहि देत दुसह दुख वहु रिपु कस न हरहु भव पीर।। लोभ ग्राह दनुजेश क्रोध कुरुराज वन्धु खल मार। तुलसीदास प्रभु यह दारुण दुख भञ्जहु राम उदार ।।

१६५—कछुहू न आइ गयो जन्म जाय। सुर दुर्लभ तन पाय कपट तजि भजे न राम मन वचनकाय ॥ लरिकाई बीती अचेत चित चञ्चलता चौगुनी चाय।। योवन ज्वर युवतीकुपथ्य करि भयो त्रदोष भरि मदन वाय ॥ मध्य वयस धन हेतु गँवाई कृषी बणिज नाना उपाय। राम विमुख सुख लह्यो न सपनेहुँ, निशि बासर तयो तिहूँ ताय ॥ सेये नहिं सीतापति सेवक साधु सुमति भलि भक्ति भाय। सुने न पुलकि तन कहे न हरषि मन किये जे चरित रघुवंश राय। अब सोचत मणि बिन भुजङ्ग ज्यों विकल अङ्ग दले जरा धाय। शिर धुनि २ पछितात मींजि कर कोउ न मीतहित दुसह दाह ।। जिनके हित परलोक बिगारो ते लजात होत ठाढ़ ठाँम। तुलसी अजहुँ सुमिरि रघुबीरहि तस्यो गयन्द जाके एक नाम॥

१६६—कबहूँ मन बिश्राम न मानो। निशि दिन भ्रमत बिसारि सहज सुख जहँ तहँ इन्द्रिन तानो ।। यदपि विषय सँग सहे दुसह दुख विषम जाल उरझानो। तदपि न तजत मूढ़ ममतावस जानतहूँ नहिं जानो ।। जन्म अनेक किये नाना बिधि कर्म कीच चित सानो। होय न विमल बिवेक नीर बिन वेद पुराण वखानो निज हित मात पिता गुरु हरि सों हरषि हृदय नहिं आनो। तुलसीदास कब तृषा जायगी सर खनतहि जन्म सिरानो ॥

१६७—जाके हैं गति हनुमान की।
ताकी पैज पूरि आई यह रेखा कुलिश पषानकी ॥ अघटित घटन सुघट विघटन ऐसी विरदावली नहिं आनकी ॥ सुमिरत संकर शोच विमोचन मूरति मोद निधानकी। तापर सानुकूल गिरिजा हर राम लषन अरु जानकी ॥ तुलसी कपिकी कृपा विलोकनि खानि सकल कल्याण की ॥

१६८-मंगल मूरति मारुत नन्दन। सकल अमंगल मूल निकंदन॥ पवन तनय संतन हितकारी। हृदय बिराजत अवध बिहारी। मातु पिता गुरु गणपति शारद। शिवा समेत शंभु शुक नारद॥ चरण बन्दि विनवौं सब काहू। देहु राम पद नेह निवाहू॥ बन्दौं राम लषन वैदेही। जो तुलसी के परम सनेही॥

१६९—भरोसो और आइ है उर ताके। कै कहुँ मिलो रामसौ सुसाहिब कै अपनो बल जाके॥ कै कलिकाल कराल न सूझत मोह मार मद छाके॥ कै सुनि राम स्वभाव न रह्यो चित जो हित सब अँग थाके॥ हौं जानत भली भाँति अपनपौ प्रभु सौ सुनो न साके॥ उपल भील खग मृग रजनीचर भले भये करतब काके। मोकों भलौ राम नाम सुरतरु सौं भयो प्रसाद कृपालु कृपाके॥

१७०--विरद गरीब निवाज रामको। गावत वेद पुरान शम्भु शुक प्रकट प्रभाव प्रताप नामको॥ ध्रुव प्रहलाद विभीषण कपिपति जड़ पतङ्ग पाण्डव सुदामको। लोक सुयश परलोक सुगति इनमें को हो राम कामको॥ गणिका कोल किरात आदिकवि इनते अधिक वामको। बाजिमेध कब कियो अजामिल गज गायो कब सामको॥ छली मलीन हीन सबही अँग तुलसी सो छीन

चामको। नाम नरेश प्रताप प्रबल जग युग २ चलत चामको ॥
१७१-राम राखिये शरण राखि आये सब दिन। विदित त्रिलोक तिहूँ काल न दयाल दूजो आरत प्रणतपाल को है प्रभु बिन॥ लाले पाले पोषे तोषे आलसी अभागी अघी नाथपै अनाथनि सों भये न उऋन। स्वामी समरथ ऐसो हौं तिहारो जैसो तैसो काल चाल हेरि होति हिये घनी घिन॥ रीझिखीझि विहँसि अनख क्यौं हूँ एक बार तुलसी तू मेरो बलि कहियत किन। जाहिं शूल निरमूल होहिं सुखअनुकूल महाराज राम रावरी सों तेहि छिन।

१७२—मन पछितैहै अवसर बीते। दुर्लभ देह पाइ हरिपद भजि करम, वचन अरु हीते॥ सहसबाहु दशवदन आदि नृप, बचे न काल बलीते। हम हम करि धन-धाम सँभारे, अन्त चले उठि रीते॥ सुत बनितादि जानि स्वारथरत, न करि नेह सबही ते। अन्तहु तोहि तजेंगे, पामर! तू न तजै अबही ते। अब नाथहि अनुराग जागि जड़, त्यागि दुराशा जीते। बुझै न काम-अगिनि तुलसी कहुँ विषय भोग बहु घीते॥

१७३-–माधव! मो समान जगमाहीं। सब विधि हीन मलीन दीन अति, लीन विषय कोउ नाहीं॥ तुम सम हेतु रहित, कृपालु, आरतहित, ईशहि त्यागी। दुख सुख शोक विकल, कृपालु केहि, कारण दया न लागी नाहिन कछु अवगुण तुम्हार, अपराध मोर मैं माना। ज्ञान भवन तन दियेहु नाथ सोउ, पाय न मैं प्रभु जाना॥ बेणु करील, श्रीखण्ड बसन्तहि दूषण मृषा लगावै। सार रहित हतभाग्य सुरभि पल्लव सो कहु कहँ पावै॥ सब प्रकार मैं कठिन मृदुल हरि दृढ़ बिचार जिय मोरे। तुलसीदास प्रभु मोह शृङ्खला छुटहि तुम्हारेहि छोरे॥

१७४—ऐसो को उदार जग माहीं। बिन सेवा जो द्रवै दीनपर, राम सरसि कोउ नाहीं॥ जो गति योग बिराग यतन करि नहिं पावत मुनिज्ञानी। सो गति देत गीध शिवरी कहँ प्रभु न वहुत जिय जानी॥ जो सम्पति दशशीश अर्पि करि, रावण शिव पहँ लीन्हीं। सो संपदा बिभीषण कहँ अति सकुच सहित हरि दीन्हीं॥ तुलसीदास सब भाँति सकल सुख जो चाहसि मन मेरो। तौ भजि राम काम सब पूरण, करैं कृपानिधि तेरो॥

१७५--दीनको दयालु दानी दूसरो न कोऊ। जाहि दीनता कहौं हौं देखौं दीन सोऊ॥ सुरनर मुनि असुर नाग साहिब तो घनेरे। पै तौलों जौलौं रावरे न नेंक नयन फेरे॥ त्रिभुवन तिहुँ काल बिदित बदत वेद चारी। आदि मध्य अन्त राम? साहिबी तिहारी॥ तोहि माँगि माँगनो न माँगनो कहायो। सुनि स्वभाव शील सुयश याचन जन आयो। पाहन, पशु, विहंग विटप अपने करि लीन्हें॥ महाराज दशरथके तें! रङ्क राव कीन्हें॥ तू ग़रीब को निवाज हौं ग़रीब तेरो॥ बारेक कहिये कृपालु तुलसीदास मेरो॥

१६७–यह विनती रघुवीर गुसाँई। और आश बिसारि भरोसो, हरिको, हरौ जीव-जड़ताई॥१॥ चाहौं न सुगति,, सुमति सुख संपति ऋधि सिद्धि विपुल बढ़ाई। हेतु रहित अनुराग राम-पद, बढ़ै अनुदिन अधिकाई॥२॥ कुटिल करम लै जाहि मोहि, जहँ जहँ अपनी बरियाई। तहँ तहँ जनि क्षण छोह छाँड़िये, कमठ-अण्ड की नाईं॥३॥ यहि जगमें जहँ लगि या तनकी, प्रीति प्रतीति सगाई। सो सब तुलसीदास प्रभु ही सों, होंहि सिमिटि इक ठाईं

१७७-और काहि माँगियेकोमाँगिबो निवारै । अभिमित दातार कौन, दुख-दरिद्र टारै ॥ धरम धाम राम काम-कोटि-रूप रूरो । साहव सब विधि सुजान, दान खड्ग शूरो ॥ सुसमय दिन द्व निशान सबके द्वार बाजै । कुसमय दशरथ के दानि ! तू गरीब निवाजै । सेवा बिन गुण विहीन दीनता सुनाये । जे जे तें निहाल किये फूले फिरत पाये ॥ तुलसीदास याचक-रुचि जानि दान दीजै । श्रीरामचन्द्र चन्द्र तू, चकोर मोहि कीजै ॥

१७८—रघुवर ! रावरी यहै बढ़ाई । निदरि गनी आदर गरीब पर, करतकृपा अधिकाई ॥ १ ॥ थके देव साधन अनेक करि, सपनेहुँ नहिं देत दिखाई । केवट कुटिल भालु कपि कौन सो किये सकल सँग भाई ॥ २ ॥ मिलि मुनिवृन्द फिरत दंडकवन, सो चरचौ न चलाई । वारहिं बार गीध शबरीकी, वरणत प्रीति सुहाई ॥ ३ ॥ स्वान कहे तें कियो पुर वाहिर, यती गयन्द चढ़ाई । सिय-निंदक मतिमंद रजक, निज नव नगर बसाई ॥ ४ ॥ यहि दरवार दीनको आदर, रीति सदा चलि आई । दीनदयाल दीन तुलसीकी काहु न सुरति कराई ॥ ५ ॥

१७९—हरि ! तुम बहुत अनुग्रह कीन्हों । साधन-धाम विबुध-दुर्लभ तन, मोहि कृपा करि दीन्हों ॥ १ ॥ कोटिहुँ मुख कहि जात न प्रभुके, एक एक उपकार । तदपि नाथ कछु और मांगिहौं, दीजै परम उदार ॥ २ ॥ विषय-वारि मन-मीन भिन्न नहिं, होत कबहुँ पल एक । ताते सहौं बिपति अति दारुण, जनमत योनि अनेक ॥३॥ कृपा डोरि बन्सी पद अंकुश, परम प्रेम-मृदु-चारो । एहि बिधि बेधि हरहु मेरो दुख, कौतुक राम तिहारो ॥ ४ ॥ हैं श्रुति-बिदित

उपाय सकल सुर, केहि केहि दीन निहोरै। तुलसीदास यह जीव मोह-रजु, जोइ बाँध्यो सोइ छोरै॥ ५॥

१८०—जो पै जिय धरिहो अवगुण जनके। तौ क्यों कटत सुकृत-नखते मो पै, विपुल बृन्द अघ-बनके॥ १॥ कहिहै कौन कलुष मेरे कृत, कर्म वचन अरु मनके। हारहिं अमित शेष शारद श्रुति, गिनत एक इक छगके॥ २॥ जो चित चढ़े नाम—महिमा निज, गुनगन पावन पनके। तौ तुलसीहि तारिहौ विप्र ज्यों दशन तोरि यमगणके॥ ३॥

१८१—काहे ते हरि मोहि बिसारो। जानत निज महिमा मेरे अघ, तदपि न नाथ सँभारो॥ १॥ पतित पुनीत दीनहित अशरण-शरण कहत श्रुति चारो। हौं नहिं अधम सभीत दीन? किधौं वेदन मृषा पुकारो?॥ २॥ खग—गणिका-गज—व्याध-पाँति जहँ, तहँ मोहू बैठारो। अब केहि लाज कृपानिधान! परसत पनवारो फारो॥ ३॥ जो कलिकाल प्रवल अति होतो, तुव निदेश तें न्यारो। तौ हरि रोष भरोष दोष गुण तेहि भजते तजि गारो॥ ४॥ मशक बिरंचि बिरंचि मशक सम, करहु प्रभाव तुम्हारो। यह सामर्थ अछत मोहिं त्यागहु, नाथ तहाँ कछु चारो॥ ५॥ नाहिंन नरक परत मोकहँ डर, यद्यपि हौं अति हारो। यह बड़ी त्रास दासतुलसी प्रभु, नामहुँ पाप न जारो॥ ६॥

१८२—ममता तू न गई मेरे मनतें। पाके केश जनमके साथी, लाज गई लोकनतें। अँग थाके कर कंपन लागे ज्योति गई नैननतें॥ १॥ श्रवण बचन न सुनत काहुके बल गयो सब इन्द्रिनतें। टूटे दशन बचन नहिं आवत शोभा गई मुखनतैं॥ २॥ कफ पित्त वात कंठपर बैठे सुतहिं बुलावत करते। भाई बन्धु सब परम पियारे नारि निकारत

धरत ॥ ३ ॥ जैसे शशि-मण्डल बिच स्याही छुटै न कोटि यतनतें। तुलसीदास बलि जाउँ चरणनकी लोभ पराये धनतें॥ ४ ॥

१८३—राम-पद-पद्म पराग परी। ऋषि-तिय तुरत त्यागि पाहन-तन छविमय देह धरी ॥ १ ॥ प्रबल पाप पति-श्राप-दुसह-दव दारुण जरनि जरी। कृपा-सुधा सींची विबुध बेलि ज्यों फिरि सुख फरनि फरी ॥ २ ॥ निगम अगम मूरति महेश मति-युवति बराय बरी। सोइ मूरति भई जानि नयन-पथ इकटक ते न टरी ॥ ३ ॥ बरणति हृदय स्वरूप शील गुण प्रेम-प्रमोद भरी। तुलसीदास ऐसे केहि आरत आरति प्रभु न हरी? ॥ ४ ॥

१८४—मनोहरताके मानो ऐन। बीच बधू विधुबदनि बिराजति उपमा कहँ कोऊ है न। मानहुँ रति ऋतुनाथ सहित मुनि-भेष बनायो हैं मैंन ॥ २ ॥ किधौं शृँगार सुखमा-सुप्रेम मिलि चले जग-चित्त-बित लैन। अद्भुत त्रयी किधौं पठई विधि मग लोगनि सुख दैन। सुनि शुचि सरल सनेह सुहावने ग्राम बधुनके बैन। तुलसी प्रभु तरुतर बिलम्ब किए प्रेम कनौड़े कैन?

१८५—पदपद्म गरीब निवाजके। देखिहौं जाइ पाइ लोचन-फल सुर हित साधु समाजके। गई-बहोरि, और-निरबाहक साजत बिगड़ी साजके। शवरी-सुखद, गीध गतिदायक, शोक शमन कपिराजके ॥ २ ॥ मो कहँ और ठौर कहुँ नाहिन जैसे काग जहाजके। आयो शरण सुखद रघुबरजी के चौंथे रावण बाजके ॥ ३ ॥ आरति हरन शरन समरथ सब दिन अपनेकी लाजके। तुलसी प्रभु मोहि कुशल पूछिहैं मोसम निपट निकाजके ॥ ४ ॥

१८६—दीन-हित बिरद पुराणन गायो। आरत हरण कृपालु, मृदुलचित जानि शरन तकि आयो ॥ १ ॥ तुम्हरे रिपुको अनुज

विभीषण वंश निशाचर जायो। सुनि गुण शील सुभाव रामको मैं चरणनि चित लायो॥ २॥ जानत दुख सुख सब दासनके तातें कहि न सुनायो। करि करुणा भरि नयन बिलोकहु तब जानौं अपनायो॥ ३॥ वचन विनीत सुनत रघुनायक हँसि करि निकट बुलायो। भेंट्यो हरि भरि अंक भरत ज्यौं लंकापति मन भायो॥४॥ कर पंकज शिर परसि अभय करि जन पर हेतु दिखायो। तुलसीदास रघुवीर भजन करि को न अभय पद पायो?॥ ५॥

१८७—अब मुनासिब है तुझे श्रीजानकीवर की शरण। आश सब पुजि है तेरी श्रीजानकी बरकी शरण॥१॥ भरमना सो भरमि आये अब न भरमो भाई तुम। श्रीअवधपुर सरयू निकट श्रीजानकी बरकी शरण॥२॥ अघ हरण दुखके दरण अशरण शरण जग हैं यहाँ। खूब खूबी है तुझे श्रीजानकी बरकी शरण॥३॥ सब गरूरी छोंड़िके तू शरण रामसवल्लभा। प्राण प्यारी हैं तुझे श्रीजानकीवर की शरण॥४॥

१८८—श्रीरामचन्द्र दशरथ नृप नन्दन यह पद भजिमन मोरारे। बालापनको खेल गमाया ज्वानी योवन जोरारे॥ वृद्ध भये चिन्ता जब उपजी अब क्या करत निहोरा रे। पांचो चोर समझि कर पकड़ो चढ़ो प्रेमरस घोड़ारे॥ ज्ञान खड्गसे मारि गिराओ यह मुजरा नर तोरारे। भूला २ कहा फिरत है जगमें जीवन थोरारे॥ धरे रहैं सब रंग महल तेरे जंगल होत बसेरारे। भवसागरकी धार कठिन तहाँ तोरा नहिं कछु मोरारे॥ कहत कबीर सुनो भाई साधू समझि देखि मन मोरारे।

१८९—जो तू राम नाम चित धरतो। अबको जन्म आगिलो तेरो दोऊ जन्म सुधरतो॥ यमकी त्रास सबै मिटि जाती भक्त नाम तेरो

पड़तो। तंदुल घृत्त सँभारि श्यामको सन्त परोसो करतो ॥ होतो नफो साधु की संगति भूलि गाँठि ते टरतो । शूरदास वैकुण्ठ पैंठिमें कोऊ न फेंट पकरतो ॥

१६०—रे मन क्यों न भजै रघुवीर। जाहि भजत ब्रह्मादिक सुरनर ध्यान धरत मुनि धीर ॥१॥ श्याम वरण मृदु गात मनोहर भञ्जत जनकी पीर। लक्ष्मण सहित सखा सँग लीन्हें विचरत सरयू तीर ॥२॥ पीत वसन दामिन द्युति निन्दत कर कमलन धनुतीर। श्रीरामदास रघुनाथ भजन बिन धृक २ जन्म शरीर ।३।

१६१—सब मत कर उपदेशू। मूल मन्त्र यह उचित सिखावन भजि मन सुत अवधेशू ॥ १ ॥ अहिपुर नरपुर देवलोकपुर रंक फकीर नरेशू। जो जापक सियराम नामको सो भव सिन्धु तरेशू ॥ २ ॥ जप तप संयम दान नेम मख तीरथ अमित करेसू। तुलहिं न सीताराम नामसम वेद पुराण कहेसू ॥ ३ ॥ गावत शंभु आदि नारद मुनिव्यास बिरंचि गणेशू ।यह सब गावत नाम महातम काकभुशंडि कहेशू ॥ ४ ॥ नाम प्रतीति राखि उर अपने उमासों कह्यो महेशू। तुलसीदास श्रीनामकी महिमा कलिमल सकल हरेशू ॥ ५ ॥

१६२—सुनिय विनय यही है नित राम नाम लीजै। ममता विसारे बंधू सब पाप राशि छीजै ॥ १ ॥ संसार स्वप्न माया सब झूठही है नाता। भाई न बाप माता कोई न साथ जाता ॥ २ ॥ सुत मित्र और दारा सब स्वारथहि का नाता। है भक्ति मुक्ति दाता श्रीरामको बताता ।३। है श्रीराम नाम सच्चा-जीवन सफल बनाता। सुख सम्पदा बढ़ाता जो राम नाम गाता ॥ ४ ॥ इतिहास वेदमें भी ईश्वर कथन किया है। "हरमुख" जपो हरीको अवतार नर लिया है ॥ ५ ॥

१६३—मेरी नाव चली बजरंग बली जरा बल्ली कृपाकी लगादेना। मुझे रोगने शोकने घेर लिया मेरे तापको नाथ मिटा देना ॥ मैं दास

तो आपका जन्मसे हूँ बालक अरु शिष्य भी धर्मसे हूँ। वेशर्म विमुख निज कर्मसे हूँ चितसे मेरा दोष भुला देना॥ दुर्बल हूँ गरीब हूँ दीन हूँ मैं निज कर्म क्रिया गति क्षीण हूँ मैं। बलबीर तेरेही अधीन हूँ मैं मेरी बिगड़ी हुईको बना देना॥ बलदेके मुझे निर्भय कर दो यश कीर्ति मेरी अक्षय कर दो। मेरे जीवन को सुखमय करदो सञ्जीवन लाय पिला देना। करुणानिधि आपका नाम भी है औ सेवक "राधे-श्याम" भी है॥ इसके अतिरिक्त यह काम भी है सियारामसे मोहि मिला देना॥

१६४—कब मिल हौ सीतारामजी हमारे॥ कब मिलि हौ !! जैसे मिले प्रभु राजा बलिको नित उठि दर्शन देत दुआरे। जैसे मिले प्रहलाद भक्तको खंभ फोरि हरिनाकुश मारे। जैसे मिले प्रभु दास विभीषण लङ्काको राज अचल दै डारे॥ जैसे मिले प्रभु द्रुपदसुता को खैंचत चीर दुशासन हारे। तुलसीदास अस कहत शेवरी हम अस पतित अनेकन तारे॥

१६५—भजि रघुबर श्याम युगल चरणा। इतहीं अयोध्यामें निर्मल सरयू उत मथुरा शीतल यमुना॥ इतहीं कौशिल्यजीके राम प्रकट भये उतहीं यशोमतिके ललना। इतहीं कौशिल्या मैया गोदखिलावें उतहीं यशोदा झुलावें पलना। इतहीं धनुषबाण कर सोहै उत मुरली मुखपर धरना। इतहीं जानकी बाँये बिराजत उत श्रीराधे सुखकी रचना॥ इतहीं रामजी अहिल्याको तारें उत कूबरि संग किये रमना। इतहीं सागर शिल उतरानी उत नखपर गिरिवर धरना॥ इतहीं रामजी रावणहिं मारे, उतहीं कंस पछारे ललना। इत "तुलसी" उत "शूर" सराहत युगल चरण पर चित धरना।

१६६—श्रीजानकी जीवन विना जीना नकाम है। षट रस प्रकार

चारिका खाना हराम है। दशआठ औनौ चारि पट बकना तमाम है। करिके करार क्या किया मनमें न राम हैं। आखिर गुलामी चामकी बिधि कर्म बाम हैं॥ जीवन यतन इस जीवको नित श्रीराम नाम है। श्रीज्ञानाअली क्षण पल सदा भजि आठो याम है॥

१९७—जक्तमें जीते सोई जिनके लगन सियरामकी। और सब जीते मरे जिनको फिकर धन धामकी॥ जिस तरह जिसने लखी सूरत सलोने श्यामकी। उस तरह उनको तकें लायक नालायक कामकी॥ छाँड़िके सारी गरूरी मान मन बिश्रामकी। करिके मजलिस देखिलो क्या मौज आठो यामकी॥ हैं असल आशिक वही जिनको लगी रट नामकी। इश्क तो हासिल नहीं निशदिन गुलामी चामकी॥ क्या वफ़ा उसके मिले ऐसे नमक हरामकी। श्रीज्ञानाअली देखो युगलछवि ज्यों घटा द्युति दामकी॥

१९७—योंहीं निशिदिन श्याम सुन्दर हम तुम्हें देखा करें॥ तुम चाहे देखो न देखो पै हम तुम्हें देखा करें॥ सब सुकृत फल है निछावर मेरे मत इस भाव पर। आप देखो मुस्कराकर हम तुम्हें देखा करें॥ नहिं निकटके योग हू तो इतना ही कर दीजिये। दूर ही बैठे नज़र भर हम तुम्हें देखा करें॥ हँसि कही "हरिजन" हूँ मैं हैरान अपने रूप पर। सत्र यही आकर कहैं कै हम तुम्हें देखा करें॥

१९८—जो पै कृपा कोरसे एक बार इशारा हो जाय। तो मेरे जीनेका कुछ रोज सहारा हो जाय॥ है कठिन आँच विरह अगिनिकी तेरी प्यारे! बज्र भी तो हो तुरत गलके पारा हो जाय॥ मैं बिसरि जाउँ सभी जो दुक्ख उठाया हमने। जो कहीं आजसे भी तू यार हमारा हो जाय॥ है तुम्हारे चरणही की मुझे केवल एक आश। ऐसा करिये कि किसी भाँति मेरा भी गुजारा हो जाय॥

हाथ हरिजनका कृपा करिके गहि लेवें जो आप। काम हो दासका अरु नाम तुम्हारा हो जाय ॥

१९९—हमारे प्रभु अवगुण चित न धरौ। समदर्शी है नाम तिहारो चाहो तो पार करो ॥ एक नदिया इक नार कहावत मैलो नीर भरौ। जब दोऊ मिलि एक बरण भये सुरसरि नाम परो ॥ एक लोहा पूजामें आवत एक घर बधिक परो। पारस गुण अवगुण नहिं चितवै कञ्चन करत खरो ॥ यह माया भ्रम जाल निवारो शूरदास सबरो। अबकी बेर मोहि पार उतारो नहिं प्रण जात टरो ॥

२००—मो सम कौन कुटिल खल कामी ॥ जो तन दियो ताहि बिसरायो ऐसो नमक हरामी ॥ भरि २ उदर विषयको धावों जैसे शूकर ग्रामी। हरिजन छाँड़ि हरी बिमुखनकी निशि दिन करों गुलामी ॥ पापी कौन बड़ो है मोते सब पतितन में नामी। शूर पतित को ठौर कहाँ हैं सुनिये सियपति स्वामी ॥

२०१—भजन बिन जीवत जैसे प्रेत ॥ मन मलीन घर घर डोलत हैं उदर भरनके हेत ॥ कबहूँ पाय पाप को पैसा गाढ़ि धूरि में देत। मुख कटु वचन करत परनिन्दा संतन को दुख देत ॥ सेवा नहिं श्रीराम चरण की भवन नील को खेत। शूरदास बहुतै का कहहूँ डूब्यो कुटम समेत।

२०२—अजहूँ शोचि समझि मन मूरख सब दिन गये विषयके हेत। तीनों पन योंहीं गये केश भये शिर श्वेत। रूँधि स्वाँस मुख बैन न आवै चन्द्र ग्रस्यो जिमि केतु। तजि गङ्गोदक पियत कूपजल हरि तजि पूजत प्रेत। अँखियन अन्ध श्रवण नहिं सुनियत थाक्यो चरण समेत। शूरदास कछु दाम न लागे श्रीराम नाम मुख लेत।

२०३—सब कछु जीवत को व्यवहार ॥ मातु पिता भाई सुत बाँधव

अरु पुनि घर की नारि। तनते प्राण होत जब न्यारे टेरत प्रेत पुकारि॥ आध घरी कोऊ नहिं राखत घरसे देत निकार। मृग तृष्णा ज्यों यह जग रचना देखो हृदय विचार॥ कह नानक भजि राम नाम नित जाते होत उवार॥

२०४—कैसे बैठो है आलस में तोपै राम कही ना जाय। भोर भयो मुख मलि २ धोयो दिन चढ़ते तेने उदर टटोयौ, वातन २ सब दिन खोयो, साँझ भई पलका पर सोयो, सोवत २ उमरि बीति गई काल शीश नियराय॥ लख चौरासी भरम गवांई बड़े भाग्य नर देही पाई॥ अबके चूक परे ना भाई॥ राधेश्याम कहें समझाई॥ जगदम्बा हैं मातु जानकी जगत पिता रघुराय॥

२०५—नाहिंन रह्यौ मनमें ठौर। नन्द नन्दन अछत कैसे आनिये उर और॥ चलत चितवत दिवस जागत स्वप्न सोवत रात। हृदय से वह श्याम मूरति क्षण न इत उत जात॥ श्याम गात सरोज आनन ललित गति मृदु हास। शूर ऐसे रूप कारण मरत लोचन प्यास॥

२०६—हरि हौं सब पतितनको टीको॥ और पतित सब दिवस चारिके होंतो जन्मत ही को। बधिक अजामिल गणिका तारी और पूतना ही को॥ कोउ न समरथ अघ करिबेको खेंचि कहत हौं लीकौ। मरियत शूर लाज पतितन में हमते को है नीको॥

२०७—सुना हरि पतित अनेकन तारे। गणिका गीध अजामिल शिवरी गावत वेद पुकारे। झूठ मूठ लखि परत हमें सब तनक दया नहिं धारे॥ नाम पतित पावन प्रभु तेरो पतित अनेक उधारे। हौं सरदार पतितन ब्रजभूषण देखब आज तुम्हारे॥

२०८—अय राम तेरे नामका मुझको अधार है। अन्धेको जैसे

लाकड़ी तनका सहार है ।। जपयोग यज्ञ और कर्म बन पड़े नहीं। कलियुगमें तेरे नामकी महिमा अपार है ।। लिखने से राम नामके जलमें शिला तरी। कैसे मनुज ना जा सके भव सिन्धु पार है ।। शिवरीके पाद नीरसे सरबर बिमल हुआ। छूनेसे चरणके तरी गौतमकी नार है ।। करिके भरोसा मनमें श्रीराम नाम सुमिरि ले। ब्रह्मानन्द मिटै जन्म मरण बार बार हैं ।।

२०९—हो मन राम नाम को गाहक। चौरासी लख जिया योंनिमें भटकत फिरत अनाहक ।। भक्ति मार्ग बैठि तू थिर ह्वै हरि नग निर्मल लेहि। काम क्रोध मद लोभ मोह तू सकल दलाली देहि ।। करि हियाव सों सौज लादि यह हरिके पुर ले जाहिं। हाट वाट कहूँ अटक न होई सब कोऊ देय निवाहि ।। और बणिजमें नाहीं लाभौ होत मूलमें हानि। शूर स्वामि को सौदा सांचों कह्यौ हमारो मानि ।।

२१०—हरिनाम सुमिरि सुखधाम जगतमें जीवन दो दिनका। पाप कपट करि माल कमाया गर्व करै धनका। सभी छोड़ कर चला मुसाफिर वास हुआ वनका। सुन्दर काया देखि लुभाया लाढ़ करै तनका। छूटी स्वांस बिखरि गई देही ज्यों माला मनका। योवन नारी लगे पियारी मौज करै मनका। काल बलीका लगे तमाचा भूलि जाय ठनका ।। यह संसार स्वप्नकी माया मेला पल क्षणका। ब्रह्मानन्द भजन करि बन्दे नाथ निरंजनका ।। हरिनाम ।।

२११—सबसे ऊँची प्रेम सगाई ।। दुर्योधनकी मेवा त्यागी साग बिदुर घर खाई। झूठे फल शिवरीके खाये बहु विधि प्रेम लगाई ।। प्रेमके वस नृप सेवा कीनी आप बने हरि नाई। राजसूयज्ञ युधिष्ठिर कीन्हों तामें झूठ उठाई ।। प्रेमके बस अर्जुन रथ हाँके भूल गये

ठकुराई ॥ ऐसी प्रीति बढ़ी वृन्दावन गोपिन नाच नचाई। शूर क्रूर इस लायक नाहीं केहि बिधि करै बढ़ाई।

२१२—अखियाँ हरिदर्शनकी प्यासी ॥ देख्यो चहत कमल नयनन को निश दिन रहत उदासी। केशर तिलक मोतिनकी माला श्रीवृन्दावन के बासी ॥ नेह लगाय त्यागि गये तृणसम डारि गये गल फांसी ॥ शूरदास प्रभु तुमरे दरश विन लैहौं करवट काशी ॥

२१३—सुनेरी मैंने निरबलके वलराम ॥ पिछिली साखि भरूँ सन्तन की आय सँभारे काम ॥ जब लग गज बल अपनों वरतो सरौ न एकौ काम। निर्बल है वल राम पुकारे आये आधे नाम ॥ द्रुपद सुता निर्बल भईतादिन गहि लाये निज धाम। दुःशासनकी भुजा थकित भई बसन रूप भये श्याम ॥ बुधिवल तपवल और बाहुवल चौथो वल है दाम। शूर किशोर कृपाको सब वल हारे को हरि नाम ॥

२१४—श्रीकृष्ण नाम सम पुन्य जगत में और नहीं भाई। कृष्ण नाम जिन मुखसे लीया योग यज्ञ जप तप व्रत कीया ॥ धन्य धन्य वाके जग जीहा धन्य पिता माई ॥ कृष्ण नाम जिन मुखसे गाया काशी पुष्कर प्रयाग नहाया ॥ मनुज जन्मकर फल उन पाया जिन सुमिरा यदुराई ॥ अजामील सुत हेतु पुकारे जल डूबत गजराज उबारे ॥ द्रुपद सुताको यश बिस्तारे कथा व्यास गाई ॥ शिव सनकादिक नारद जाने श्रुति पुराण सुर सिद्धि बखाने। श्रीकृष्ण दास हरि नामकी महिमा सबसे अधिकाई ॥

२१५—मोहन बसि गयो मेरे मनमें। जित देखों तित वोही दीखे घर बाहर आंगन में ॥ रोम रोम प्रति अंग अंगमें छाय रह्यो सब तन में। लोक लाज कुल कान छूट गई याकी नेक लगन में ॥ मोर मुकुट पीताम्बर सोहैं नूपुर ध्वनि चरननमें। कुंडल झलक कपो-

लन सोहैं बाजूबन्द भुजनमें ॥ चपल नयन भृकुटी वर बाँकी ठाढ़ो सघन लतनमें । नारायण बिन मोल बिकीहूं याकी नेक हँसनमें ॥

२१६—भजिमन राम नाम सुखखानि । यह अवसर तोहि फिरि न मिलैगो कह्यो हमारो मानि ॥ दुर्लभ साज पाय मन मेरे मति भूलै अभिमान । भाई बन्धु औ कुटम कबीला कोउ न अपनो जान ॥ अन्त समय तेरे काम न आवें, हैं सब दुखकी खानि । यमके किंकर जब धरि लैहैं तब सोचे बड़ी हानि ॥ श्रीरामदयाल समयके रहते करिले यतन सुजान ॥ भजि मन रामनाम सुखखानि ।

२१७—ते नर नरक रूप जीवत जग भव भञ्जन पद विमुख अभागी । निशि बासर रुचि पाप अशुचि मन खल मति मलिन निगम पथ त्यागी । नहिं सत्संग भजन नहिं हरिको श्रवण न राम कथा अनु-रागी । सुत बित दार भवन ममता निशि सोवत अति न कबहुँ मति जागी ॥ तुलसीदास हरिनामसुधा तजि शठ हठि पियत विषय विष माँगी । शूकर श्वान शृगाल सरिस जन जन्मत जगत जननि दुख लागी ॥

२१८—सो धौं को जो नाम लाज ते नहिं राख्यो रघुवीर । कारु-णीक बिन कारण ही हरि हरत विषम भवभीर ॥ वेद विदित जग विदित अजामिल विप्र बन्धु अघ धाम घोर यमालय जात निवार्यो सुत हित सुमिरत नाम ॥ पशु पामर अभिमान सिंधु गज ग्रस्यो आइ जब ग्राह । सुमिरत सकृत सपदि आये प्रभु हरेउ दुसह उरदाह । व्याध निषाद गृद्ध गणिकादिक अगणित अवगुण मूल । नाम ओट ते राम सबनको दूरि करेउ सब शूल ॥ केहि आचरण घाटि हौं तिनते रघुकुल भूषण भूप । सीदत तुलसीदास निशवासर पर्यो भीम तमकूप ॥

२१९—श्रीराम नामके जपे ते जाय जियाकी जरनि कलिकाल अपर उपाय ते अपाय भये जैसे तम नाशिवेको चित्रके तरनि॥ करम कलाप परिताप पाप साने सब ज्यों सुफूल फूलै तरु फोकट फरनि। दम्भ लोभ लालच उपासना विनाशि नीके सुगति साधन भई उदर भरनि॥ योग न समाधि निरुपाधि न बिराग ज्ञान वचन विशेष भष कबहुँ न करनि। कपट कुपथ कोटि कहनि रहनि खोटि सकल सराहैं निज निज आचरनि॥ मरत महेश उपदेश हैं कहा करत सुर-सरि तीर काशी धरमधरनि। श्री राम नामको प्रताप हर कहैं, जपें आप युग-युग जाने जग वेदहूबरनि॥ नेम रामनामहीं सों प्रेम राम-नामहीं सों गति रामनामहीं की बिपति हरनि। रामनाम सों प्रतीति प्रीति राखें कबहुँक तुलसी ढरैंगे राम आपनी ढरनि॥

२२०—लाभ कहा मानुष तन पाये।

काय वचन मन सपनेहु कबहुँक घटत न काज पराये। जो सुख सुर-पुर नरक गेह बन आवत बिनहिं बुलाये। तेहि सुख कहँ मन यतन करत बहु समझत नहिं समझाये॥ परदारा पर द्रोह मोह बस किये मूढ़ मन भाये। गर्भवास दुखराशि यातना तीव्र बिपति बिसराये॥ भय निद्रा मैथुन अहार सबके समान श्रुति गाये। सुरदुर्लभ तन धरि न भजे हरि मद अभिमान गँवाये॥ गई न निज पर बुद्धि शुद्ध है रहे न राम लब लाये। तुलसीदास यहि अवसर बीतेका पुनि कै पछिताये॥

२२१—द्वारे हौं भोर हीको आज।

रटत ररिहा आरि और न कौरहीके काज। कलिकाल कराल दुकाल दारुण सब कुभाँति कुसाज। नीच जन मन ऊँच जैसी कोढ़मेंकी खाज॥ हहरि हिय मैं सदय बूझ्यो जाइ साधु समाज। मोकों हूँ

कहुँ कतहुँ कोउ तिन कह्यो कोशलराज ॥ दीनता दारिद दलैका कृपावारिध बाज ॥ दानि दशरथरायके सुत बानिइत शिरताज ॥ जनमको भूखो भिखारी हौं गरीब निवाज ॥ पेट भरि तुलसीहि जिमाइये भक्ति सुधा सुनाज ।

२२२—रघुबरहि कबहूँ मन लागि है । कुपथ कुचाल कुमति कुमनो-रथ कुटिल कपट कब त्यागि है ॥ जानत गरल अमिय विमोह बस अमिय गनत करि आग है । उलटी रीति प्रीति अपने की तजि प्रभु पद अनुरागि है ॥ आखर अर्थ मंजु मृदु मोदक रामप्रेमपाग पागि है ॥ ऐसे हरि गुण गाय रिझाय स्वामि सों पाइ है जो मुख माँगि है ॥ तू यहि विधि सुख शयन सोइ है जियकी जरनि भूरि भागि है । श्रीरामप्रसाद दासतुलसी उर राम भक्तियोग जागि हैं ॥

२२३—रे मन राम सों करि प्रीत ॥ ध्रु ॥ श्रवण गोविन्द गुण सुनो अरु गाव रसना गीत ॥ करि साधुसङ्गत सुमिरि माधव होय पतित पुनीत ॥ काल व्याल ज्यों लग्यो डोलै मुख पसारे मीत ॥ आजकल पुनि तोहिग्रसि है समझि राखो चीत ॥ कहैं नानक राम भजिले जात अवसर बीत ॥

२२४—रे मन मूरख जनम गँवायो । करि अभिमान विषय रस राच्यो श्याम शरण नहिं आयो ॥ यह संसार फूल सेमर को सुन्दर देखि भुलायो । चाखन लाग्यो रुई उड़ि गई हाथ कछू नहिं आयो ॥ कहा भयो अबके मन सोचे, पहिले नाहिं कमायो । कहत शूर भगवंत भजन बिन शिर धुनि धुनि पछितायो ॥

२२५—दीनन-दुख-हरन देव सन्तन हितकारी ॥ ध्रु ॥ अजामिल गीध व्याध, इनमें कहो कौन साधु । पक्षी को पद पढ़ात, गणिका सी तारी ॥ ध्रुवके शिर छत्र देत; प्रह्लाद को उबार लेत । भक्त हेतु

बांध्यो सेतु, लङ्कापुरी जारी ॥ तन्दुल देत रीझि जात, साग-पात सों अघात। गिनत नहीं जूठे फल, खाटे मीठे खारी ॥ गज को जब ग्राह ग्रस्यो. दुःशासन चीर गह्यो। सभा बीच श्रीकृष्ण कृष्ण द्रौपदी पुकारी ॥ इतनेमें हरि आय गये, वसनन आरूढ़ भये। शूरदास द्वारे ठाढ़ो आँधरौ भिखारी ॥

२२६—निर्बलके प्राण पुकार रहे जगदीश हरे जगदीश हरे। स्वांसों के स्वर झनकार रहे जगदीश हरे जगदीश हरे॥ आकाश हिमालय सागरमें पृथ्वी पाताल चराचरमें। यह मधुर बोल गुंजार रहे जगदीश हरे जगदीश हरे॥ जब दया दृष्टि हो जाती है सूखी खेती हरियाती है। इस आशपै जन उच्चार रहे जगदीश हरे जगदीश हरे। सुख दुःक्खोंकी चिन्ता है नहीं भय है विश्वास न जाय कहीं। टूटे न लगा यह तार रहे जगदीश हरे जगदीश हरे। तुम हो करुणाके धाम सदा सेवक है राधेश्याम सदा। बस इतना सदा बिचार रहे जगदीश हरे जगदीश हरे॥ २॥

२२७—-अपना समझिके अपने सब काम बना देना। अबतक तो निवाह्या खूब है आगे भी निभा देना॥ भव सिंधुके भँवरमें नैया जो फंसी मेरी। बस इतनी कृपा करना उस पार लगा देना॥ दल बलके साथ आकर माया जो घेरे मुझको। तुम देखते न रहना चट आके बचा लेना॥ संभव है झंझटोंमें मैं तुम्हें भूल जाऊँ। पर नाथ, कहीं तुम भी मुझको न भुला देना॥ तुम इष्ट मैं उपासी तुम देव मैं पुजारी। यह बात सांच है तो सच करके दिखा देना॥

२२८—मूरख तू शोच मनमें हरिनाम क्यों बिसारा। सुनता नहीं बजे है शिर कालका नगारा॥ योवन भरी ए? नारी दिलको लगै पियारी जब मौतकी तयारी तुझसे करे किनारा ॥ १॥ घर माल

धन खजाना सँगमें न कोई जाना क्यों देखके लुभाना सब झूठ है पसारा ॥ २ ॥ सुन्दर यह देह तेरी होवे भसमकी ढेरी पलकी लगे न देरी बृथा करे विचारा ॥ ३ ॥ मायाके जालमाहीं मूरख रहा फँसाई ब्रह्मानन्द मोक्ष पाई श्री हरिचरणका सहारा ॥ ४ ॥

२२९—श्रीराम सुमिरि राम सुमिरि राम सुमिरि भाई। राजा रानी वजीर पंडित ज्ञानी सुधीर बड़े बड़े शूरवीर धरणिमें समाई ॥ १ ॥ ब्रह्मादिक देव वृन्द तारागण सूर्य चन्द्र सागर पर्वत बुलंद सबन काल खाई ॥ २ ॥ सेना, सब राज, पाट, बाजी, गज, राज ठाट, नारी, घरबार हाट छूटे पलमाहीं ॥ ३ ॥ झूठे सब कारवार जगमें हरिनाम सार। ब्रह्मानन्द बार बार जपिले मन लाई ॥ ४ ॥

२३०—भजिले रामनाम सुखधाम तेरा पूरण हो सब काम ॥ काशी जावे मथुरा जावे तीरथ फिरे तमाम। जाय हिमाँचल करे तपस्या नहिं पावे विश्राम ॥ जटा रखाये भस्म रमाये जंगल किया मुकाम। सद्गुरुकी संगति नहिंकीनी मिलै न आतमाराम ॥ आसन साधे भोजन साधे साधे प्राणायाम। घटमें ब्रह्मस्वरूप न चीन्हों कीनो यतननिकाम ॥ संतसमागम करे निरन्तर जगसे हो उपराम। ब्रह्मानन्द परमपद पावे हौवे मन निष्काम ॥

२३१—मान ले कहना हमारा जीका लालच छोड़दे। चारदिनकी जिन्दगी आखिर यहाँसे जायगा ॥ सब तरफसे दिल हटा हरिके चरणमें जोड़दे। यह सभी स्वारथ भरे हैं जिनको प्यारे जानता भजनकर श्रीरामका सबसे प्रीती तोड़दे ॥ बालकपना जो बन गया बूढ़ा हुआ मरने लगा ॥ अबतो मूरखचेतकरविषयोंसे मनको मोड़ दे ॥ यह तेरा मानुषजनम पलपलमें बीता जा रहा ॥ ब्रह्मानन्द मिलै नहीं फिर जो तू लाख करोड़दे ॥

२३२---सुमिर नर रामनाम सुखधाम। तेरा पूरण हो सब काम॥ जन्ममरणके बंधन छूटें पावे पद निर्वाण॥ लालचतज विषयोंका मनसे नहिं इनमें आराम। हरिके चरणकमलका चिंतन करले आठो याम॥ दिनदिनपलपलछिनछिन आयु बीतीजाय तमाम। नश्वरकाया थिरकर माने भूला फिरे निकाम। ब्रह्मानन्द भजो सीतावर तुरत मिलै विश्राम॥

२३३ -करी सव तुम्हरी ही होई। जो अपनो पुरुषारथ मानत झूठो है सोई। साधन मंत्र यंत्र उद्यमवल यह सब चलें न कोई॥ जो लिख राखी आप पिताजी मेटि सकै नहिं कोई॥ विश्वमोहिनी माया तुम्हारी ठग खायो संसार। ब्रह्मा शिव नारद हू ठगिके, ठगे बड़े बड़े तपधार॥ बिना कृपा तुम्हरीके प्रभुजी नहीं कोई पाया पार। बेग दयाकर पार लगावो शरण हौं आयो तुम्हार॥

२३४—हे सकल विश्व के कर्ता। हे सर्व दुक्ख संहर्ता। हे अजर अमर अविकारी। हे सुरनर मुनि अधिकारी॥ हे जन्म शून्य अविनाशी। हे सकल गुणों के राशी। हे ब्रह्मादिक के स्वामी हे सबके अन्तर्यामी॥ हे निज भक्तोंके रक्षक। हे दुष्ट जनों के भक्षक। मैं सेवक सदा तुम्हारा। नहिं तकूँ और का द्वारा॥ अब करो करुणादृष्टि अघारी। अब रच्छा करो हमारी। सत्य मार्ग हमें दिखलावो। दुक्खों से शीघ्र छुड़ावो॥ जव लोभ मोह उर आवै। वह महा क्लेश बुझावै। अब करुणा करके हेरो। दुष्कर्मों से मन फेरो॥ हमको निजदास :विचारो। भवसागर पार उतारो। देहु दया धर्ममें प्रीती। उर वसे हमारे नीती॥

२३५—तेरीहू बनि जायगी गोबिन्द गुणगाये से। ध्रुवकी बनि गई प्रहलाद की बनि गई भिलिनी को बनि गई झूठे वेर के खवायेते॥ गज की बनि गई औ ग्राह की बनि गई गोपियोंकी

बनि गई प्रीति के लगाये से ॥ कौरवों की बनि गई पाँडवों की बनिगई द्रौपदी की बनिगई चीर के बढ़ायेते ॥ राँका की बनि गई बाँका की बनि गई गणिकाकी बनि गई सूआके पढ़ाये से ॥ कबिरा की बनि गई शूराकी बनि गई तुलसी की बनि गई राम गुण गाये से ॥

२३६—आज हरि आये विदुर घर पाहुना ॥ विदुर नहीं. घर थीं विदुरानी, आवत देखे शारँगपाणी । फूली अँग न समावै चिन्ता भोजन कहा जिमावना ॥ १ ॥ केला बहुत प्रेमसे लाई, गरी गरी सब देत गिराई। छिलका देत श्याम मुखमाँहीं, लागे परम सुहावना ॥ २ ॥ इतने माँहि विदुरजी आये, खोटे खारे वचन सुनाये । छिलका देत श्याम मुखमाँहीं कहाँ गँवाई भावना ॥३॥ केला विदुर लिये करमाँहीं, गरी देत गिरधर मुखमाँहीं । कहैं कृष्णजी सुनो विदुरजी, वो सवाद नहीं आवना ॥ ४ ॥ बासी-कूसी रूखे—सूखे, हम तो विदुरजी प्रेमके भूख। 'शम्भु' सखी धनि-धनि विदुरानी "हरिजन" मान बढ़ावना ॥ ५ ॥

२३७—भक्त हैं मेरे जीवन प्रान । जब जब भीर परत भक्तनपर, धरतहमारो ध्यान । उसी समय सुधि लेत गरुड़ चढ़ि त्यागि खान अरु पान ॥ १ ॥ भ० ॥ भक्त हेतु अवतार लेत हूँ भूमंडल में आन । मैं भक्तन को भक्त हमारे, करत सदा सनमान ॥ २ भ०॥ जो कोई मेरी शरण लेत है, मुझको अपनो जान । मेरे हृदय बसत सो निशि दिन, सज्जन सन्त सुजान ॥ ३ ॥ भ० ॥ मैं अपने पूरण भक्तोंको देत हृदयमें थान । शालिग्राम नामसे बढ़कर और कौन सो दान ॥ ४ ॥ भ० ॥

२३८—यह कहना साफ़ गलती है तुम्है क्योंकर रिझाऊँ मैं ।

सुनो मेरे रिझानेका सरल रास्ता बताऊँ मैं ॥ टेक ॥ रिझाया था मुझे भिलनीने झूठे चार बेरोंपर। न झूठे मीठे खट्टोंपर कभी आँखे लगाऊँ मैं ॥ १ ॥ रिझाना जो मुझे चाहे विदुरसे पूछले रास्ता। सुदामाकी झपट गठरी खड़ा चावल चबाऊँ मैं ॥ २ ॥ न रीझूँ गान गप्पोंसे न रीझूँ तान टप्पोंसे। वहा दो प्रेम के आँसू चला बस आप आऊँ मैं ॥ ३ ॥ न रीझूँ फूल ओ फलसे न गंगाजीके भी जलसे। हृदयमें भेद है जबतक कहो क्योंकर समाऊँ मैं ॥ ४ ॥ न पत्थरका मुझे समझो नरम हूँ मोमसे बढ़कर। गरम आहें जो छोड़ोगे पिघल बस तुरत जाऊँ मैं ॥ ५ ॥ न दिलमें आग सच्ची है न आँखोंमें हैं प्रेमाश्रु। बतादे तुलसी फिर तुझको सहज मैं कैसे पाऊँ मैं ॥ ६

२३६—कर उस दिनकी याद कि जिस दिन चल चल चल होगी। आवेंगे यमके दूत पकड़ ले जावेंगे घड़ी नहीं गम खावेंगे मुशकिल पल पल पल होगी ॥ जिस तिनके ऊपर तनता है तू बाँका छैला बनता है सो कंचन काया तेरी खास सब जल जल जल होगी। कहै" टीकमकर सफल कमाई संग नहीं चलि हैं एक पाई चढ़नेको दो बांस कफ़नको मल २ मल होगी ॥ ३ ॥

२४०—जागो २ भारत वासी अबतो देखो आँख उघार। सारे देश उठे उन्नति हित हो संगठित अपार। तुमहीं बेसुध पड़े हुए हो विद्या बुद्धि बिसार॥ रूस, फ्रांस, इटली अमेरिका आष्ट्रिया हंगार। ब्रिटिश 'स्पेन' जापान, जर्मनी करते आविष्कार। किसी समय में तुम भी थे सब भूतलके सरदार धर्म धुरन्धर धीरज धारी अरु विज्ञानागार॥ किन्तु फूट पथपर चलकर तुम पड़े बिपति मझधार। लगे लुटेरे लूट मचाने आ

भारतके द्वार ॥ बल वैभव हर लिया तुम्हारे छीन लिये हथियार। किये पतित परतन्त्र पददलित तुमको सभी प्रकार॥ अब आलस अविलम्ब तजो करलो निज जाति, सुधार। स्वतन्त्र होकर "वीर" हिन्दको करिये स्वर्गागार॥

२४१—हमारा प्यारा भारत देश। भारत ही आराध्य देव है, भारत ही सर्वेश। भारत तन हैं भारत मन है, भारत ही बस जीवन धन है ॥ मातु पिता सुत मीत बन्धु है, वही प्रिया प्राणेश। गंगा, यमुना, सरयू धारा, सिन्धु नर्मदा बहै अपारा॥ मुकट हिमालय उज्वल लखिके मोहित है सब देश। श्रीराम, कृष्णका लीलो थल है, वुद्ध "वीर" का धामबिमल है॥ धर्म हेतु पुरुषोत्तम धरते, बार बार नर भेष। अखिल विश्वका आदि गुरू है, सत्य धर्मका कलपतरू है॥ "वीर" तिलक, गांधी, वो जवाहर, प्रगटे पुरुष विशेष ॥हमारा॥

२४२—देखो तो जग मनुज कहाँ से कहाँ पहुँच कर भाई। धर्म, नीति विज्ञान, कला विद्या वल सुमति सुहाई॥ की उन्नति निज देश जाति भाषा सभ्यता सुखांकी। तुम सबने सीखी वह बान रही जो खान दुखोंको॥ धर्म तत्व से हुए शून्य सब बिना विचार विचारे। फन्देमें फँस अल्पज्ञों के दाव सबै निज हारे॥ क्षमा, सत्य, धृत, दया, अस्तेय अहिंसा त्यागी॥ शम, दम, तितिक्षादि यम नियम बिहीन विषय अनुरागी॥ परंब्रह्म से विमुख सदा तुम सिद्धि कहां से पाओ। नित्य नये दुख सहते पर भी तनक नहीं पछिताओ॥॥ रक्खो ईश कृपाकी आशा, शरण उसीकी जाओ। मंगल होगा सदा तुम्हारा सहज सिद्धि सब पाओ॥ समझो तो कैसा बिरोध आपसका सबने ठाना।

बैर फूटका फल अद्यापि नहीं क्या तुमने जाना ॥ बीती जो उसको भूलो सँभलो अबतो आगेसे । मिलो परस्पर सब भाई बँधि एक प्रेमके धागे से ॥ बैठो सब थलएक ध्याय सर्वेश एक अविनाशी । एक विचार करो हिलमिल कर जग आतंक प्रकाशी । लोक और परलोक उभय सँग जब साधोगे भाई ॥ तब यथार्थ सुख पावोगे खोकर यह सब कठिनाई ॥ शिल्प कला सम्यक प्रकार उन्नतिकर शीघ्र प्रचारो ॥ निज व्यापार अपार प्रसार करो-जग यश बिस्तारो । अपनी जाति वस्तु, अपने आचार देश भाषासे ॥ रक्खो प्रीति रीति निज धर्म भेष पर अति ममता से । राज अर्थ औ धर्मनीति तीनों को सङ्ग मिलाओ ॥ दृढ़ उद्योग निरालस होकर करौ सफल फल पाओ । सबसे प्रथम धर्म सञ्चयका यत्न करो ए प्यारे ॥ सकल मनोरथ होते सफल धर्मके एक सहारे ॥ मुख्य सत्य बल संचय करके मनमें दृढ़ करि जानो ॥ जहाँ सत्य जय तहाँ नियम यह, निश्चय करके मानो ।

२४३—भजिले मन राम राम रामसिया रामा ॥ राम नाम कमल फूल संतन मन भ्रमर भूल पीवत रस झूमि २ अमृत रस पाना ॥१॥ राम नाम वेद मूल इन सम नहिं और तूल छूटत भव त्रिविध ताप पावत निजधामा ॥३॥ राम नाम विमल नीर साधन सत्संग तीर पावत अनुपम शरीर अनुपम अनुपाना ॥४॥ राम नाम निराकार तुलसी दास नमस्कार दीजे निज भक्तिसार क्षण क्षण परनामा ॥ भजिले मन राम राम राम सियारामा ॥

२४४—जय जय गोपाल कृष्ण जगके प्रतिपाल कृष्ण । अच्युताभिराम कृष्ण लीला के धाम कृष्ण ॥ कृष्ण कृष्ण हरे कृष्ण,

कृष्ण कृष्ण राधाकृष्ण । जब जब होती हानि धर्म की तब तब प्रभु लेते अवतार। कष्ट मिटाते भक्तजनों का हरते भूमण्डल का भार ॥ जय अभिराम पूरण काम लीला धाम राधेश्याम। जय जय गोपाल कृष्ण जगके प्रतिपाल कृष्ण ॥

२४५—जय कृष्ण मनोहर योग तरे। यदुनन्दन नन्दकिशोर हरे । जय रास रसेश्वरि पूर्णतमें। वरदे वृषभानु किशोरी रमे ॥ जय तीय कदम्बतरे ललिता। कल वेणु-समीरस गान्यरता । जय राधिका यहाँ हरि एक मता। संततरुणी गण मध्यगता।

२४६—चरण कमल-वन्दौं हरि राई। जाकी कृपा पंगु गिरि लंघै अंधे को सब कछु दरशाई॥ बहिरो सुनें मूक पुनि बोलै रंक चलै शिर छत्र धराई। शूरदास स्वामी करुणामय बार बार वन्दौं तेहि पाई॥

२४७—रहना नहिं देश विराना है। यह संसार कागज की पुड़िया बूंद पड़े घुल जाना है। यह संसार कांटे की बारी उलझि उलझि मरि जाना है॥ यह संसार झाड़ और झांकर आग लगे बरि जाना हैं। कहत कबीर सुनो भाई साधो सद्-गुरु नाम ठिकाना हैं॥

२४८—हम भक्तन के, भक्त हमारे। सुनि अर्जुन, प्रतिज्ञा मेरी, यह व्रत टरत न टारे॥ भक्तै काज लाज हिय धरिकै, पाँव पयादे धाऊँ। जहँ २ भीर पड़ै भक्तन पै तहँ २ जाइ छुड़ाऊँ॥ जो मम भक्तसों वैर करत हैं, सो निज वैरी मेरो। देखि विचारि भक्त हितकारण हांकत हौं रथ तेरो॥ जीते जीत भक्त अपने की, हारे हार विचारों। "शूरदास" सुनि भक्त विरोधी चक्र सुदर्शन जारौं॥

२४६—तुम मेरी राखो लाज हरी। तुम जानत सब अन्तर्यामी, करनी कछु न करी॥ औगुन मोते बिसरत नाहीं, पल क्षण एक घरी। सब प्रपंचकी बाँधि पोटरी, अपने शीश धरी॥ द्वारा-सुत-धन मोहि लिये हैं, सुधि-बुधि सब बिसरी। शूर पतितको वेगि उधारो, अब मेरी नाव भरी॥

२५०—ऊधौं मन न भये दश बीस। एक हतो सो गयो श्याम सँग को अवराधै ईश॥ इन्द्री शिथिल भईं केशव बिन ज्यों देही बिन स्वाँस। आशा लगी रहत तन मनमें जीवो कोटि बरीस॥ तुमतो सखा श्यामसुन्दरके सकल योगके ईश। शूरदास वा रसकी महिमा जो पूछें जगदीश॥

२५१—रे मन, कृष्ण नाम कहि लीजै। गुरुके वचन अटल करि मानहु, साधु-समागम कीजै। पढ़िये गुनिये भक्ति भागवत, और कहा कथि कीजै। श्रीकृष्णनाम बिन जनम बादिही, विरथा काहे जीजै॥ श्रीकृष्णनाम-रस बह्यो जात है। तृषावन्त ह्वै पीजै। शूरदास हरिशरण ताकिये, जनम सफल करि लीजै॥

२५२—जो सुख होत गोपालहिं गाये। सो नहिं होत किये जपतपके, कोटिक तीरथ न्हाये॥ दिये लेत नहिं चारि पदारथ, चरण- कमल चित लाये। तीनि लोक तृणसम करि लेखत, नंदनँदन उर आये॥ बंशीबट वृन्दावन यमुना, तजि वैकुण्ठ को जाये। शूरदास हरिको सुमिरण करि, बहुरि न भव चलि आये॥

२५३—दीनानाथ अब बार तुम्हारी। पतित उधारण बिरद जानिकैं, बिगरी लेहु सँभारी ॥१॥ बालापन खलत ही

खोयो; युवा विषयरस माते। वृद्ध भयो सुधि प्रगटी मोको, दुखित पुकारत ताते ॥२॥ सुतनि तज्यो, तिय, भ्रात तज्यो तजि त्वचा भई जो न्यारी। श्रवण न सुनत चरणगति थाकी, नैन बहै जल धारी ॥३॥ पके केश कफ-कंठ बिरोध्यौ, कल न परी दिन राती। माया मोह न छाँडै तृष्णा, ए सबही दुखदाती ॥४॥ अब यो व्यथा दूरि करिवेको, और न समरथ कोई। शूरदास प्रभु करुणासागर, तुम ते होइ सो होइ ॥५॥

२५४—समझि धर ध्यान उस दिनका भयानक अन्त का होगा। सभी बोलेंगे आ तुझसे न तू बोलेगा चुप होगा॥ आँख मिचती हो आवेंगी नब्ज खिचती हो जावेगी। नहीं कुछ तेरा बसावेगा कंठ कफ से रुका होगा॥ तेरे सबही कुटम्बी जन रौवेंगे शीश को धुन धुन। मचेगा घरमें हाहा-कार जब जगसे विदा होगा॥ समझता जिसको तू अपना जगत हैं रैनका सपना। भजन कर रामका प्यारे वही एक साथमें होगा॥

२५५—जित देखो तित श्याम मई है। श्याम कुंजवन यमुना श्यामा श्याम गगनघन घटा छई है। चन्द्र सार रवि सार श्याम है मृग मद श्याम काम बिजई है। नील कंठको कंठ श्याम हैं मनों श्यामता भेलि भई है। सब रंगन में श्याम भलो है लोग कहत यह बात नई है। मति बौरानी लोगन हीं की श्याम पुत-लीया बदल रही है। "श्री" के अक्षर श्याम देखिये दीपशिखा पर श्याम तई है। नर देवनकी मोहनि श्यामा अलख ब्रह्म छबि श्याम मई है॥

२५६—रसना वही जो हरि गुणगावे। नैननकी तो यही चतुरता जो मुकन्द चरणन चित लावे॥ कर तो वही जो श्री हरि पद सेवें चरणन चलि वृन्दावन जावे॥ श्रवणन की तो यही चतुरता सुनि हरिकथा सुधारस प्यावै।॥ निरमल मन तो सोई साँचो श्रीकृष्ण विना जीय और न भावे। शूरदास जाइय बलिताकी जो श्रीहरि सों प्रीति लगावे—

२५७—आलीरी मेरे नैनन वान पड़ी। चित चढ़ी मेरे माधुरी मूरति, उर विच आन अड़ी॥ कबकी ठाढ़ी पन्थ निहारूँ अपने भवन खड़ी। मीरा गिरधर हाथ विकानी, लोग कहैं विगड़ी

२५८—श्रीराम नाम रसपीजै मनुआँ, राम नाम रस पीजै। तजि कुसंग सतसंग वैठ नित, हरि चरचा सुन लीजै॥ काम क्रोध मद लोभ मोहकूँ, बहा चित्तसे दीजै। मीराके प्रभु गिरधर नागर, ताहिके रँगमें भीजै॥

२५९—हे ईश! करुणासिन्धु! तू गुणग्राम सर्वाधार है। लीलामये! तेरी दयाका लग न सकता पार है। भवभार-भंजन भक्तरंजन ईश! हे करुणानिधे। निर्बन्ध होकर भी प्रभो! तुम भक्त मानसमें वँधे। प्रभु! दुखग्रसित इस देशका बस एक तू अवलम्ब है। दुख दूर करनेमें कभी अब लौं हुआ न विलम्ब है। फिर भूलकर क्यों रीति अपनी इस समय करुणामये, निर्मम बने तुम क्यों उदासी आज हो धारण किये। हम हैं पतित पर तुम पतित-पावन कहाते हो सदा। घेरे हुए हमको चतुर्दिक है प्रभो हैं आपदा। देखो इधर छाया गगनमें दुःखका घनश्याम है। तू ही बता घनश्याम! अबलौं क्यों छिपा घनश्याम है। हम खोजते फिरते तुम्हें हैं पर छिपे तुम हो कहाँ क्या आर्तस्वर पहुँचा

नहीं उस ठौर रहते हो जहाँ। फिर क्या करायें याद हम प्राण आपका फिर आपसे। विश्वास है रक्षा मिलेगी अब प्रभो! सन्तापसे। हममें न साधन शक्ति है, संसार चाहे रुष्ट है। विश्वास पर तेरी शरणमें नाथ! यह दृढ़ पुष्ट है। तुम भूल सकते हो नहीं मनसे कभी इस दासको। तुम सींचते रहना कृपा-जलसे सदा इस आशको।

२६०—तजो रे मन राम विमुखको संग।

जिनके संग कुमति उपजति है परत भजनमें भंग॥
कागहि कहा कपूर चुगाये श्वान नव्हाये गंग॥
खर को कहा अरगजा लेपन मरकट भूषण अङ्ग॥
गजको कहा नव्हाये सरिता बहुरि खेह धरै अङ्ग।
पाहन पतित बान नाहिं भेदत रीतो करत निषंग॥
शूरदास खल कारी कामरि चढ़त न दूजो रंग।

२६१—भजि रघुनन्दन सीतारे, मन भजि रघुनन्दन सीतारे। शोक मिटावन सब अघ दावन हरिको भजन पुनीतारे॥ अस प्रभु यश चित दै जो गावत लोभ मोहको जीतारे॥१॥ जो नहिं भजन रामको होवै वादिहि जीवन बीतारे। एकहु बार भजै जो हरि नित, कटैं पाप सब मीतारे॥२॥ ऐसो परम दयाल न कोऊ जैसे हरि जग हीतारे। निश्चय करि जो भजे निशिवासर तेहि जग तरण सुभीतारे॥३॥ अधम उधारन सब दुख टारन भक्तनके जो मीतारे। जनजगन्नाथ प्रसन्न हैं जापर तेहि क्या भव भय भीतारे॥४॥

२६२—भजन श्रीरामका कर लो इसीमें सब भलाई है। नहीं दुनियांमें ऐ गाफ़िल कोई उस दिन सहाई है॥१॥ पड़ा है मोह

मायामें अरे नादान क्यों भूला, यह कैसी मूढ़ताई यार दिलपर तेरे छायी है ॥२॥ जो लज्जत नाम लेनेसे जबांपर आई हैं मेरे। शकर वो कन्द मिश्रीमें न पाई हैं न पाई हैं ॥३॥ बयाँ क्यों कर करू ऐ दोस्तो जो ला बयाँ होवे। मजा बेहद्द वो पाया ज्यों गूँगे को मिठाई हैं ॥४॥ भजन ही सार है जगमें समझले खूब ऐ शङ्कर। यही एक साथ जानेवाली दुनियां की कमाई है ॥

२६३ श्रीराम राम क्यों ना बोलो फिर पीछे पछितावोगे। जिसने तुमको पैदा किया उसका नाम क्यों ना लिया। ए ? नर देहियाँ बन्दे फेरि नहिं पावोगे॥ श्रीराम राम॥ १ ॥ आवेंगे यमके दूत पकरि ले जावेंगे। मागेंगे हिसाब बन्दे फेर क्या बतलाओगे। श्रीराम राम ॥ २ ॥ त्रिया कुटम्बकी खातिर बन्दे बहि बहि कमाओगे। माया तेरे संग न जइहै भरम गँवाओगे ॥ श्रीराम राम ॥३॥ आवोगे 'शूर' शरण आवागमन मिटाओगे। श्रीरामको सुमिरले बन्दे पार लग जाओगे।

२६४—कहु काहि कहिये कृपानिधे भव जनित विपति अति। इन्द्रिय सकल विकल सदा निज निज स्वभाव रति॥ जो सुख संपति स्वर्ग नरक संतत सँग लागी। हरि परिहरि सोइ यत्न करत मन मोर अभागी॥ मैं अति दीन दयालु देव सुनि मन अनुरागे। जो न द्रवहु रघुवीर धीर काहे न दुख लागे॥ यद्यपि मै अपराधभवन दुखशमन मुरारे। तुलसीदास कहँ आश इहै वहु पतित उधारे॥

२६५—माधव मोहफाँस क्यों टूटै। वाहर कोटि उपाय करिय अभ्यन्तर ग्रन्थि न छूटै॥ घृतपूरण कराह अन्तरगत शशि प्रति-बिम्ब दिखावै। तरु कोटर महँ वस बिहंग तरु काटे मरै न जैसे

साधन करिय विचारहीन मन शुद्ध होइ नहिं तैसे॥ अन्तर मलिन विषय मन अति तन पावन करिय पखारे। मरइ न उरग अनेक यत्न वलमीकि विविध विध मारे॥ तुलसीदास हरि गुरु करुणा विन विमल विवेक न होई॥ विन विवेक संसार घोर निधि पार न पावे कोई॥

२६६—काहेको फिरत मन करत वहु यतन मिटै न दुख विमुख रघुकुलवीर। कीजै जो कोटि उपाय त्रिविध ताप न जाय कह्यो जो भुज उठाय मुनिवर कीर॥ सहज टेव विसारि तुहीं धौं देखि विचारि मिलै न मथतवारि घृत विनु क्षीर। समझि तजहु भ्रम भजहु पद युगम सेवत सुगम गुण गहन गँभीर॥ आगम निगम ग्रन्थ ऋषि मुनि सुर सन्त सवही को एक मत सुनि मति धीर। तुलसीदास प्रभु विन प्यास मरै पशु यद्यपि हैं निकट सुरसरि तीर॥

२६७—भजिमन रामचरण सुखदाई। जेहि चरणन से गंग प्रकट भई शंकर शीश चढ़ाई॥ जटा शंकरी नाम पड़ो है त्रभुवन तारन आई। जेहि चरणनकी चरण पादुका भरत रहे मन लाई॥ सोई चरण केवट धोयलीने तव हरिनाव चढ़ाई। सोई चरण संतजन सेवत सदा रहत लवलाई॥ सोई पग गौतम ऋषि नारी, परशि परम पदपाई। दण्डक वन प्रभु पावन कीनो ऋषियन त्रास मिटाई॥ सोई प्रभु त्रलोकके स्वामी कनक मृगा सँग धाइ। कपि सुग्रीव वंधुभय व्याकुल तिन जयक्षत्र धराई॥ रिपुको अनुज विभीषण निश्चर परशत लंका पाई। शिव सनकादिक अरु ब्रह्मादिक शेष सहस मुख गाई॥ तुलसीदास मारुत सुतकी प्रभु निज मुख करत वड़ाई।

२६८—ऐसो कब करिहौ मन मेरो॥ कर करवा गुञ्जन के हरवा कुञ्जन माहिं बसेरो व्रजवासिन के टूक भूठ अरु घर २ छाछ महेरो भूख लगे जब माँगि खाहुँ हों गनों न शाम सवेरो इतनी आश व्यासकी पुरवहु मेरे ग्राम न खेरो?

१ भूँजत भवके बीजको, सींचत सुख धन धाम॥
डाटत यमके दूत को, गर्जि कहैं श्रीराम॥

२ स्वारथ परमारथ सुलभ, एक रामकी ओर।
द्वार दूसरे दीनता तुलसी उचित न तोर॥

३ जहाँ राम तहँ काम नहिं, नहीं काम जहँ राम।
कह तुलसी किमि होयँगे, रवि रजनी एक ठाम॥

४ राम नाम मुख आवते, होत पापको नाश।
जैसे चिनगी आगकी, परी पुरानी घास॥

५ भरत हरिन सों नेह करि, हरिन भये तजि देह।
तुलसी उनकी कौन गति, जिनको हरि सों नेह॥

६ प्रभुता को सब कोइ भजै, प्रभुको भजे न कोय।
तुलसी जो प्रभुको भजे, प्रभुता चेरी होय॥

७ तुलसी अपने रामको, रीभि भजौ चाहैं खीभ।
खेत पड़े पर जमत हैं, उलटा सीधा बीज॥

८ कलियुग सम युग आन नहिं, जो नर कर विश्वास।
गाय राम गुणगण विमल, भवतरि विनहिं प्रयास॥

९ तुलसी चतुर सराहिये, राम चरण लवलीन।
परमन परधन हरन को वेश्या परम प्रवीन॥

१० सन्त मिलन को जाइये, तजि ममता अभिमान।
ज्यों ज्यों पग आगे परे, त्यों त्यों यज्ञ समान॥

११ तुलसी राके कहत ही, निकसत पाप पहार।
पुनि भीतर आवत नहीं, हनत मकार किवार॥

१२ तुलसी पिछिले पापसे, हरि चरचा न सुहाय।
कै औंघे कै लड़ि मरें, कै घर को उठि जाँय॥

१३ राम नाम जो लेत हैं, उनके पगकी धूरि।
सकल पदारथ देनको, अहै सजीबन मूरि॥

१४ राम नाम हरदी गिरा, रगरे से सरसाय।
जग जीवन रगड़े बिना, ज्यों का त्यों रहि जाय॥

१५ मुक्ति भक्ति आधीन है, यतन करो मति कोय।
खेती करो अनाज की, सहज घास भुस होय।

१६ श्रीराम नाम अवलम्ब बिन परमारथकी आस॥
बरसत बारिद बूँद गहि चाहत चढ़न अकास।

१७ चाहत धन धरती नहीं, चाहत नगर न ग्राम॥
केवल चाहत युगल छवि, श्यामा मय वपुश्याम॥

१८ अधर लगी मुरली मधुर, मन्द मन्द मुसिक्यान।
जेहि लखि सखियाँ अर्पिदीं, आपन तन मन प्राण॥

१९ मोर मुकट कटि काछनी, कर मुरली उर माल।
यह बानक नित उर बसौ सदा बिहारीलाल॥

२० रहिमन कोऊ का करै, ज्वारी चोर लबार।
जो पति राखन हार है माखन चाखन हार॥

२१ बृजभूषण दूषण हरण, शरण तुम्हारी आय।
को जन सुख जो ना लहै, लेत न सुगति बनाय॥

२२ जगमें हितुआ द्वै अहैं, एकहरि एक हरिदास।
स्वारथ बस सब जगत है, कह"गणेश" केहि आस॥

२३ जो रक्षक जननी जठर, सो प्रभु गयो न आहि।
घर बाहर औ पन्थमें भजन करौ तुम ताहि॥

२४ तुलसी सब छल छाँड़िके, करहु राम पद नेह।
अन्तर पति से हैं कहा, जिन देखी सब देह॥

२५ नारि द्वार पशु गोठ रह, मित्र चिता लगि साथ।
मरि "गणेश" इकिले चले, हरि सों किया न नात॥

२६ दशहजार गज बल घटो, घटो न दश गज चीर।
कोटिन बैरी का करें, जो सहाय रघुबीर॥

२७ कंचन तजनो सहज हैं, सहज त्यागनों बाम।
मान बढ़ाई ईर्षा, यह तजनों हैं काम॥

२८ धवल महल शैय्या धवल, धवल शरद ऋतु रैंन।
एक राम बिन व्यर्थ सब, ज्यों पुतली बिन नैन॥

२९ सम्पति सारे जगतकी, स्वांसा सम नहिं होय।
सो स्वाँसा रघुबीर बिन, तुलसी वृथा न खोय॥

३० नारायण हरिदास की, है सहजहि पहचान।
आप अमानी होत हैं, देत सबहिको मान॥

३१ लगन महूरत योग बल, तुलसी गनत न काहि।
राम भये जेहि दाहिने, सबै दाहिने ताहि॥

३२ चाकी चलती देख कर, दियो कबीरा रोय।
इन द्व पाटनके बीचमें, साबित बचो न कोय॥

३३ जग चक्की अरु ईश कलि, देही सकल अनाव।
तुलसी जो उबरन चहो, शरण ईश की जाव।

३४ तुलसी तजि रघुबीर पन, करै भरोसा और।
सुख सम्पतिकी को कहैं, नरकहु लहै न ठौर॥

३५ तुलसी रघुपति विमुख को बढ़ो कहत सब कोय।
जैसे दीपक बुझै को बढ़ो कहत सब कोय॥

३७ तुलसी बिलम्ब न कीजिये, भजि लीजै रघुबीर।
तन तरकस से जात हैं, स्वाँस सरीखे तीर॥

३८ कोटि गऊ दे कोटि सुलक्षण, कोटि सुमेरन देय धना।
श्रीरामनाम समतुल्य न होइहैं कोटि तीर्थ करि आवोरे मना॥

३९ योग यज्ञ जप तप किये, गई न मनकी आश।
तेली केसे बैलको, घरही कोस पचास॥

४० राम कहो रीझे खिझे, सुलभ होय सब काम।
अमिय भूल कर पीजिये, "हरिहर" तन नहिं खाम॥

४१ राम नाम सम युक्ति कछु, जगमें सुलभ न कोय।
"हरिहर" सोऊ नहिं कहो, क्यों नहिं दुर्गति होय॥

४२ श्रीराम नाम कलिकाल में, सब साधनकी मूल।
"हरिहर" सीताराम बिन, साधन सभी फजूल॥

४३ श्रीराम नाम बिन सुख चहैं, सो ऐसो अज्ञान।
"हरिहर" चाहैं सिन्धु तरि, जैसे बैठि पषान॥

४४ एक भरोसे रामके, पाप कीन भरि मोट।
जैसे नारि कुनारि हो, छिपी खसमकी ओट॥

४५ भक्ति पक्ष अति सुलभ है, साधन नहीं प्रयास।
राम भरोसा राम गति, "हरिहर" सत्य सुभाष॥

४६ एक भक्ति ही के किये, सुलभ होय सब काम।
"हरिहर कूकुर कौर लगि परघर कहु का काम॥

४७ भक्ति नहीं कुछ भेद है, मुख श्रीराम उचार।
"हरिहर" यमकर भय नहीं, तरिजावो भव पार॥

४८ कबीर हरिके मिलनको, युक्ति सुनी हम दोय।
कै मुख हरिको नाम ले, कै कर ऊँचा होय॥

४६ वाद विवादा दुख घना, बोले होत उपाधि।
मौन रहे सबकी सुनै, सुमिरे नाम अगाध॥

५० राम नाम महिमा अमित, कहते वेद पुकार।
"हरिहर" सीताराम बिन नहिं कलि आन आधार॥

५१ नहिं पद्मा नहिं पद्मजहु, नहिं तस प्रिय, मम देह।
जस मोकहँ मम दास प्रिय, जो किय सब तजि नेह॥

५२ एक दिन ऐसा होयगा, काहूको कोउ नाहिं।
घरकी नारी को कहैं, तनकी नारी नाहिं॥

५३ भक्ति बिना सोहै नहीं, विद्या धन छवि मूल।
रहित सुगन्ध सजै नहीं, जैसे सेमल फूल॥

५४ लिया रामके भजनसे—शङ्कर शङ्कर रूप।
राम विमुख गिरगिट भये—दानी नृगसे भूप॥

५५ सुत बनिता धन धाम, जो सब इतहीं रहिजाय।
नरक स्वर्ग यमलोकमें, नामहिं होत सहाय॥

५६ धन्य पुत्र हरिभक्त जो, धन्य पतीव्रत नारि।
जासों परमारथ सधे—धन्य सो द्रव्यविचार॥

५७ नारायण संसारमें भूपति भये अनेक।
मैं मेरी कहते गये लै न गये तृण एक॥

५८ सुनि बोले प्रहलाद तव-मातु पिता गुरु सोय,
करे जो सन्मुख रामके जहँ लगि निज बल होय।

५६ पढ़ब लिखब सोई सफल, राम चरण रति होय।
नातरु पुनि मूरख भला, बाद न ठाने कोय।

६० नाम रूप लीला सुरति, धाम बास सत्संग।
स्वाँति सलिल श्रीराम मन, चातक प्रीति अभंग॥

६१ राम सनेही राम गति, राम चरण रति जाहि।
तुलसी फल जग जन्मको दियो विधाता ताहि॥

६२ कूकर शूकर करत हैं, खान पान सम्भोग
तुलसी वृथा न खोइये यह तन भजिवे योग॥

६३ जड़ताई मतिकी हरत, पाप निवारत अंग।
कीरति सत्य प्रसन्नता, देत सदा सत्सङ्ग॥

६४ श्रीरामहिं रसरंगमणि, प्रेम भावकी भूख।
शिवरी की वदरी चखी मनमें निदरि पियूष॥

६५ उमा योग जप दान तप, मख व्रत नाना नेम।
राम कृपा नहिं करहिं तस जस निष्केवल प्रेम॥

६६ धन योवन तेरो जाय यों जैसे उड़त कपूर।
नारायण गोपाल भजि क्यों जग चाटै धूर॥

६७ तुलसी नारो जगतको मिलै सङ्ग में गंग।
महा नीचपन आदिको शुद्ध करै सत्संग॥

६८ राम प्रेम माते फिरैं पीवें प्रेम निशंक।
आठ गाँठ कोपीन में कहा इन्द्र सों रंक॥

६९ दीया जगत अनूप है, दीया करो सब कोय।
घरका धरा न पाइये जो कर दीया न होय॥

७० "हरिहर" हरिसों प्रीति करि ज्यों किसान की रीति।
दाम चौगुनो ॠण घनो तऊ खेत सों प्रीति॥

७१ जिन २ भक्तन प्रीति की तिनके बस भगवान।
सैन होय नृप टहल किये नामदेव की छान॥

७२ राम लगावहु आपमें ज्यों किसान मन खेत।
श्रीराम चरण शीतोष्ण सहि निशदिन तहाँ सचेत॥

७३ राम रूप रत धाम रहि लीला नाम अनन्य।
श्रीरामनाम मुख मन्त्रजप कर रसरंग सो धन्य॥

७४ जग मङ्गल कीरति उदय तीनों ताप नशाय।
हरिजन को गुण गावते हरि हृद अटल वसाय॥

७५ जो हरि प्राप्तिकी आश है तो हरिजन गुणगाव।
नतु सुकृत भुने बीजसम जन्म जन्म पछिताव॥

७६ अग्र कि उबरै राम पद, कै संतन की बाँह।
हा हा करिना छूटि हौ बैरी वस परि बाँह॥

७७ साधु सताये हानि त्रय धर्म अर्थ अरु वंश।
टीला नीके देख लो रावण कौरव कंस॥

७८ संतन निन्दा अति बुरी भूलि करो मति कोय।
कहे सुने सब जन्मके सुकृत डारत खोय॥

७९ भजन भरोसे रामके मगहर तजे शरीर।
अबिनाशीकी गोदमें विहरत दास कबीर॥

८० परहित रत सियरामपद प्रीति सदा सत्संग।
सहज विरागहि उर धरे का वन का गृह रंग॥

८१ जे जन रूखे विषय रस चिकने राम सनेह।
ते तुलसी प्रिय राम कहँ कानन बसहिं कि गेह॥

८२ जाके पल्ले राम धन ता सम धनी न कोय।
चिन्तन ही करता रहे, तन मनकी सुधि खोय॥

८३ बुध जन जो पहले भजै, सुखी राम पद प्रेम।
धनीं राम धन जोड़ कर, तुलसी राखत नेम॥

८४ हरि विमुखी है धर्म तजि, जाको पालो पूत।
मरे पिता आँगन परे, पूत कहै भये भूत॥

८५ सभी रसायन हम करो, नहीं नाम सम कोय।
रंचक घटमें संचरे, सब तन कंचन होय॥

८६ माला स्वाँसो स्वाँसकी, फेरेंगे हरिदास।
चौरासी भटकैं नहीं; मिटै कालकी त्रास॥

८७ मोर तोरकी जेबरी, बटि बाँधा संसार।
दास कबीरा क्यों बँधे, जाके राम अधार॥

८८ हम देखत जग जात है जग देखत हम जाहिं।
आपन ठाढ़े राहमें, औरन को पछिताहिं॥

८९ कहताहूँ कहि जातहूँ, यही बजाये ढोल।
स्वाँसा खाली जात है, तीन लोक का मोल॥

९० सुमिरनकी सुधियों करो, ज्यों सुरभी सुत माहिं।
कह कबीर चारा चरत, बिसरत कबहूँ नाहिं॥

९१ गणिका यवन गयन्द से, वाल्मीक अघखानि।
नाम कहत सब तरि गये, कहँ लगि करौं बखान॥

९२ नानक जाघर राम हैं, सो घर मंगल रूप।
बिना राम धृक्कार हैं, सुन्दर पण्डित भूप॥

९३ छैसह इकईस हैं सदा, स्वाँस एक दिन रात।
सब लुहारके चाम ज्यों, बिन हरि नाम बितात॥

९४ चिन्ता तो हरि नामकी, और न चितवै दास।
जो कछु चितवै नाम बिन, सोई काल की फाँस॥

९५ गुरु करिवो सिद्धान्त यह, होय यथारथ बोध।
अनुचित उचित लखाय उर, तुलसी मिटै विरोध॥

९६ जब लगि या संसारकी, मुधा माधुरी मीठ।
तब लगि सुख सपने नहीं, रामचरण शुठि सीठ॥

९७ दो बातन को भूलि मत, जो चाहै कल्यान।
नारायण एक मौत को, दूजे श्री श्रीभगवान॥

९८ नारायण जो कहा भये, पाये नयन बिशाल।
नयन वही जिनमें बसें, श्रीराधेगोपाल॥

९९ नाम मिलावे रूपको, जो जन खोजी होय।
जबहिं नाम हिय संचरै, क्षुधा रहै नहीं कोय॥

१०० राम नामको अंक हैं सब साधन हैं शून।
अंक गये कछु हाथ नहिं, अङ्क रहे दशगून॥

१०१ काशी बिधि बसि तन तजै, हट तन तजै प्रयाग।
तुलसी जो फल सो सुलभ, श्रीराम नाम अनुराग॥

१०२ मीठौ और कठौत भरो, रौताई और क्षेम।
स्वारथ परमारथ सुलभ, श्रीरामनामके नेम॥

१०३ स्वारथ सुख सपनेहुँ अगम परमारथ परवेश।
राम नाम सुमिरत मिटहिं, तुलसी कठिन कलेश॥

१०४ तुलसी हठि हठि कहत नित, चित सुनि हित कर मानि।
लाभ राम सुमिरण बड़ो बड़ी बिसारे हानि॥

१०५ बिगड़ी जन्म अनेककी, सुधरै अबहीं आज।
होउ राम को राम जपि, तुलसी तजि कुसमाज॥

१०६ प्रीति प्रतीति सुरीति सों, राम नाम जपि राम।
तुलसी तेरो है भलो, आदि मध्य परिणाम।

१०७ राम नाम कलि काम तरु, रामभक्ति सुरधेनु।
सकल सुमंगल मूल जग, गुरुपदपंकज रेनु॥

१०८ श्रीरामनाम कलि कामतरु, सकल सुमंगल कन्द।
सुमिरत करतल सिद्धि सब, पग पग परमानन्द॥

१०९ यथा भूमि सब बीज मय, नखत निवास अकाश।
श्रीरामनाम सब धर्ममय, जानत तुलसीदास॥

११० राम नाम परताप सों, प्रीति प्रतीत भरोस।
सो तुलसी सुमिरत सकल, सगुण सुमंगल कोष॥

१११ हरण अमंगल अघ अखिल, करण सकल कल्याण।
श्रीरामनाम नित कहत हर, गावत वेद पुराण॥

११२ राम भरोसो राम बल, श्रीरामनाम विश्वास।
सुमिरि राम मंगल कुशल, चाहत तुलसीदास॥

११३ रामनाम रति रामगति, रामनाम विश्वास।
सुमिरत शुभ मंगल कुशल चहुँ दिशि तुलसीदास॥

११४ रसना साँपिन वदन बिल, जो न जपहिं हरिनाम॥
तुलसी प्रेम न राम सों, ताहि बिधाता बाम॥

११५ तुलसी राम सुदृष्टि ते निबल, होत बलवान।
वैर बालि सुग्रीव के कहा कियो हनुमान॥

११६ बिन सत्संग न हरि कथा, तेहि बिन मोह न भाग।
मोह गये बिन राम पद, होय न दृढ़ अनुराग॥

११७ श्रद्धा विना भक्ति नहिं; तेहि विन द्रवहिं न राम।
राम कृपा विन सपनेहु, मन न लहै बिश्राम॥

११८ काया कसौ कि वन बसौ, हँसो गहो रहि मौन।
तुलसी मन जीते विना, मिटै न है दुख जौन॥

११९ अस विचारि मतिधीर, तजि कुतर्क संशय सकल॥
भजहु राम रघुवीर, करुणाकर सुन्दर सुखद॥

१२० श्रीरामचन्द्रके भजन बिन जो चह पद निर्वाण।
ज्ञानवन्त अपि सोउ नर, पशु बिन पूँछ विषाण॥

१२१ जेहिं शरीर रति राम सों, सोइ आदरें सुजान।
रुद्र देह तजि नेह बस, बानर भे हनुमान॥

१२२ नाम न आवे तव दुखी, आये सुख सन्तोष।
दादू सुख दुख राम को, दूजा हर्ष न शोक॥

१२३ विद्या हीन बिलोकि कलि, तुलसी के मन खेद।
तब बिरच्यो रामायण जग हित पंचम वेद॥

१२४ अपने अपने मत लगे बादि मचावत शोर।
ज्यों त्यों सब को सेइबो एकै अवध किशोर॥

२२५ भव वारिध को पार नहीं, ऐसो हैं फैलाव।
तुलसीदास कृपा करि, रचि रामायण नाव॥

२२६ तुलसीदास रामायण, नहिं करते परचार।
कलिके कुटिल जीव ये को, करतो निस्तार॥

२२७ लोभ सरिस अवगुन नहीं तप नहिं सत्य समान।
तीरथ नहिं मन शुद्धि सम, विद्या सम धन आन॥

२२८ खायो जाय सो खाय रे, दियो जाय सो देय।
इन दोनों से जो बचे, सो तुम जानो खेह॥
सो तुम जानो खेह, सिक्के पुनि काम न आवें।
सर्ब शोक को बीज पुनः, पुनि तुम्हे रुलावें॥
कह गिरधर कविराय, चरण त्रय धनके गायो।
दान, भोग बिन नाश होत जो दियो न खायो॥

१२९ करै बुराई सुख चहै, कैसे पावे कोय।
रोपै बिरवा आकको, आम कहाँ से होय॥

१३० तुलसी काया खेत है, मनसा भयो किसान ।
पाप पुन्य दो वीज हैं, ववै सो लुनें निदान ॥

१३१ बसि कुसंग चाहत कुशल तुलसो जिय अफसोस ।
महिमा घटी समुद्र की रावण बसा परोस ॥

१३२ कदली सीप भुजंग मुख, स्वाँति एक गुण तीन ।
जैसी संगति कीजिये, तैसोई फल लीन ॥

१३३ तुलसी रामहुँ ते अधिक, रामभक्त जिय जान ।
ऋणियाँ राजा राम भे धनिक भये हनुमान ॥

१३५ सभा सुयोधनकी शकुनि सुमति सराहन योग ।
द्रोण बिदुर भीषम हरिहिं कहहिं प्रपंची लोग ॥

१३६ कहा विभीषन ले मिल्यो, कहा बिगरो बालि ।
तुलसी प्रभु शरणागतहिं सब दिन आए पालि ॥

१३७ तुलसी कोशल पालसौ, को शरणागत पाल ।
भञ्ज्यो विभीषन बन्धुभय, भंज्यो दरिद दुकाल ॥

१३८ कृपिण देइ पाइय परो, विन साधे सिधि होइ ।
सीतापति सनमुख समझि, जो कीजै शुभ:सोइ ॥

१३९ प्रीति पपीहा पयदकी, प्रगट नई पहिचानि ।
याचक जगत कमावड़ो कियो कनोड़ो दानि ॥

१४० अवसर कौड़ी जो चुके वहुरि दिए का लाख ।
दुइज न चंदा देखिये, उदय कहा भरि पाख ॥

१४१ भलो भले सों छल कियो, जनम कनोडो होइ ।
श्रीपति शिर तुलसी लसति, बलिबावन गति जोइ ॥

१४२ तुलसी खल बाणीमधुर सुनि समझिय हिय हेरि ।
राम राज बाधक भई मूढ़ मंथरा चेरि ॥

१४३ भागे भल आड़ेहु भलो, भलो न घाले घाव।
तुलसी सबके शीशपर रखवारो रघुराव॥

१४४ जो परि पाँय मनाइये तासों रूठि बिचारि।
तुलसी तहाँ न जीतिये जहाँ जीतेहु हारि॥

१४५ बोल न मोटे मारिये मोटी रोटी मारि॥
जीति सहस सम हारिबो जीते हारि बिचार॥

१४६ बचन कहे अभिमानके पारथ पेषव सेतु।
प्रभुतिय लूटत नीचभर जय,न, मीचु तेहि हेतु॥

१४७ राम लषन कौशिक सहित सुमिरहु करहु पयान।
लक्ष्मि लाभ लै जगत यश मंगल सगुन प्रमान॥

१४८ अनहित भय परहित किये पर अनहित हित हानि।
तुलसी चारु विचारि भल करिय काज सुनि जानि॥

१४९ दो हा चारु विचारि चलि परिहरि बाद बिवाद।
सुकृति-सीव स्वारथ अवधि परमारथ मरयाद॥

१५० शिष्य, सखा, सेवक, सचिव, सुतिय, सिखावन साँच।
सुनि समझिय पुनि परिहरिय पर मनरञ्जन पाँच॥

१५१ निडर ईशतें बीसकै बीस बाहु सौ होइ।
गयो गयो कहैं सुमति सब, भयो कुमति कह कोइ॥

१५२ अपयस योग कि जानकी मणि चोरीकी कान्ह।
तुलसी लोग रिझाइबो करषि कातिबो न्हान॥

१५३ माँगि मधुकरी खातते सोवत गोड़ पसारि।
पाप प्रतिष्ठा बढ़ि परी ताते बाढ़ी रारि॥

—:७०:—

खादी का बस्त्र ब्यवहार धर्म धन तथा देशकी रक्षाके साथ दरिद्र नारायणकी सेवा है

आमके आम गुठली के दाम। पैसे की बचत ओ देश का काम

खादी में व्यय किया हुआ धन सोलहों आने गरीब, भूखे देश बासियोंके घर जाता हैं' जिसका ब्यवरण इस प्रकार हैं।

रुई उपजाने वाले कृषिकको		≡)
बिनौला साफ करने वाले को	—	)॥
धुननेवालेको	—	‑)॥।
कातनेवालेको	—	।)॥।
बुननेवालेको	—	।)॥
धोनेवालेको	—	)॥
फेरी करने वाले को	—	‑)
		१) रु०

अत: इन गरीबोंके लिये आज ही से खादी पहनने और सर्वदा स्वदेशी वस्तुओंका व्यवहार करनेकी प्रतिज्ञा कर लीजिये।

खादी पहनना भारतके गाँवोंमें रहने वाली अति दरिद्र, भूखी दुखी स्त्रियोंके पेटमें अन्न पहुँचाना है। कारण उनके जीवनका एकमात्र सहारा खादी ही हैं।

अत: प्रत्येक धर्मप्राण व्यक्तिके लिये अत्यन्त शुद्ध और पवित्र वस्त्र खादी ही हैं' क्योंकि प्राय: सभी प्रकारके बने हुये मिलोंके वस्त्रोंमें चर्वी लगती है। अत: धर्म रक्षा और देश-सेवा तथा लोक-सेवाकी दृष्टिसे भी भारतवासी मात्रका यह सर्वोपरि कर्तव्य हैं कि खादीके अतिरिक्त वे अन्य किसी वस्त्रका उपयोग न करें।

* बोलो सियाबर रामचन्द्र की जै *

—०::०—

संग्रहकर्त्ताकी श्रीगुरुपरम्परा

श्रीरामानन्द सम्प्रदाय सुखद श्रेष्ठ सुगम अति,
कलिमल हरण हेतु सुरसरि की धारा है।
सिद्धि लपणकोट धाम श्रीअवध में प्रसिद्ध,
जहाँ आदि गुरु श्री जीवाराम नाम प्यारा है।
ज्ञान मार्तण्ड श्रीयुगलानन्यशरण शिष्य,
तिमिरि अविद्या मेंटि भक्ति धर्म जिन प्रचारा है।
पण्डित श्रीजानकीवरशरण तिनके श्री शरण,—
रामवल्लभाजी भे, जेहि तपत्याग से विदित जग सारा है॥

सो०—तस्यानुज मतिमान, शरणश्रीरामप्रसादजी।
शिष्य अल्पमति जान, संग्रह किय 'हरिहर' शरण॥

१—वेदन प्रचारै मन साधन विचारै मन, योगानल जारै तन स्वाँस नव मनको। साधन समाधै महामन्त्र अवराधै उर, साध वसु आसन यों इन्द्रिय दमन को॥ सातो पुरी तीरथ तपोवल सुमेर दान, लछिराम सनमानै देव द्विजगन को। वासर पहर एक परिहर काम और, अभिराम नाम जपि श्रीजानकी रवनको॥

२—दामिनी दरन हार चन्द्र सौ बदन देखि, कामिनी मदन माया मोहमें न फन्दै रे। सुतके सुताके बनिता ममता के हेतु, धाय २ धाके सब छाँड़ि छलछन्दै रे॥ ध्याव रघुनन्दै दूर होय दुख द्वन्दै सुख सम्पति अमन्दै बढ़ै कीरति बुलन्दै रे। अरे मति मन्दै सब छाँड़ि फरफन्दै, एक आनँद के कन्दै श्रीरामचन्द्र क्यों न बन्दै रे॥

३—रमापति राघो रघुनन्दन रटन करि, ध्यान कर चारु चक्रपाणि चित चहुरे। अच्युत औ केशव मुरारि मधुसूदन जी, गोविन्द गोपाल गरुड़ध्वज को गहुरे॥ कहैं "विश्वनाथ" विश्वनाथ श्रीविश्वम्भरजी, आनन्द के कन्द रघुनन्दन पद लहुरे। ऐरे मन-मीता सुनि लै ज्ञान गीता अरे, बीता जौन बीता अब श्रीसीता राम सीताराम कहुरे॥

श्रीगुरुचरणकमलेभ्यो नमः ॥ श्रीसीतारामाभ्याँ नमः ॥

हे ईश बहु उपकार तुमने स .दा हम पर किये ।
उपकार प्रति उपकार में क्या दूँ तुम्हें इनके लिये ॥
है क्या हमारा श्रृष्टि में यह सब तुम्हीं से है बनी ।
संतत ऋणी हम हैं तुम्हारे तुम हमारे हो धनी ॥
लोक शिक्षा के लिये अवतार जिसने था लिया ।
निर्विकार निरीह होकर नर सदृश कौतुक किया ॥
श्रीराम नाम ललाम जिसका सर्व मंगल धाम है ।
प्रथम उस सर्वेश को श्रद्धा समेत प्रणाम है ॥

पंचम संस्करण

श्रद्धेय श्रीराम भक्त महानुभावो आज आपके शुभाशीर्वाद एवं श्रीसीतारामजी की पूर्ण कृपा से श्रीरामनामामृत के पंचम संस्करण का शुभावसर आठ मासमें ही प्राप्त हुआ है। यह हरिदासोंका प्रेम व भक्तमण्डली का धर्म प्रचार सराहनीय है आशा है आप सब पाठक एवं श्रोतावृन्द इससे लाभ उठा अपनेको कृतार्थ करते हुए श्रीरामनाम के प्रचार में सहायक होंगे साथ ही प्रायः कर बहुत से प्रकाशकों एवं संग्रहकर्ताओं का ध्येय एकाधिपत्यका होता है किन्तु सेवक का उद्देश यह नहीं (और हो भी क्यों जब कि मेरा इसमें कुछ कृत्य नहीं है) जो भी सज्जन श्रीरामनाम एवं श्रीराम भक्ति प्रचारार्थ इस संग्रहको प्रकाशित करना चाहें स्वेच्छा से प्रकाशित कर सकते हैं किन्तु व्यापारिक रूपमें नहीं अस्तु०—

पुस्तक मिलनेका पता—

श्रीयुत बा० देवीदत्तजी सूरजमलजी खेतान

खेतानवंश पडरौना (गोरखपुर) तथा

हरप्रसाद शर्मा "श्रीमिथिला कुंज" १२८ [illegible] कलकत्ता